श्री वीतरागाय नमः

संसारका नक्शा

(ईश्वर जगतका कर्ता नहीं है।)
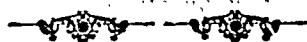
लेखक और प्रकाशक

कुड्डमल जैन

सुपुत्र—श्रीमान् लाला जुगलकिशोरजी रईस

हिसार (पंजाब)

卐

प्रथम वार	आषाढ वीर नि० २४९०	मूल्य
२०००	जुलाई सन् १९६४	सम्यग्ज्ञान

वक्तव्य

श्रीमान् लाला कुडुमलजी जैन रईस हिसार (पंजाब) निवासी उन धार्मिक विवेक शील व्यक्तियों में हैं, जिन्हें पूर्व जन्म में उपार्जित पुण्य कर्मके उदयसे मनुष्य जन्म मिला है और मिले हैं ऐहिक सुख सामिग्री के समस्त साधन। आपका जन्म संपन्न रईस घराने में होकर भी आपकी बुद्धि विवेकपूर्ण है आप अपना हित करनेमें तो सावधान हैं ही, अन्य जीवों के हितार्थ भी अपना तन मन धन लगानेमें प्रयत्न करते रहते हैं।

धन का होना अति सरल है, परन्तु उसका सदुपयोगमें—स्वपर कल्याणमें लगाना अति कठिन है। इन्द्रिय भोगोंमें सदा आसक्त रहकर सुख मानने वाला यह जीव अपने पुण्यसे प्राप्त धन आदि साधनों को अपने ऐश आराम में लगाकर ही संतुष्ट होता है और असली हित प्राप्त करनेका उद्यम नहीं करता। परन्तु लालाजी इसके अपवाद हैं। आप पुण्यफलको पुण्योपार्जन करने में लगाते रहते हैं। धनाढ्य होने के साथ आप ज्ञानी भी हैं और उस सरस्वती—लक्ष्मी संगमका ही यह फल है कि आप स्वयं कल्याणकर लेख, पुस्तक, ट्रेक्ट लिखते हैं, अपने द्रव्य से छपाते हैं और बिना मूल्य सर्व साधारणमें वितीर्ण करते हैं। अब तक आप हजारों रुपये ज्ञान प्रचार

में लगा चुके हैं। वीतराग देवकी भक्ति वश आत्मज्ञान की वृद्धिकेलिये आपने पूजन भजन संग्रह डेढ हजार, आत्म कल्याण मार्ग १०००० दश हजार, संसारका नकशा का चार्ट कलेण्डर (दीवाल पर टांगनेका) २००० दो हजार अपने खर्चसे छपाकर विनामूल्य वितीर्ण कर चुके है। अब यह पुस्तक संसारका नकशा [ईश्वर जगत कर्ता नहीं है) दो हजार प्रति परोपकारार्थ आपने छपाई हैं।

लालाजी की भावना है कि—समीचीन ज्ञानके प्रचारार्थ अन्य लोग भी अपने तन मन धनका सदुपयोग करें इसलिये जो कोई भी आपकी लिखी और छपाई पुस्तकों को छपाना चाहें, वह शांतिसागर जैन सिद्धांत प्रकाशिनी संस्था श्रीमहावीरजी (राजस्थान) की मारफत छपा सकते हैं, बांट सकते हैं और मूल्यसे वेच भी सकते हैं।

पुस्तक की उपयोगिता

संसार में आत्मा और परमात्मा के विषयमें महान् अज्ञानांधकार फैला हुआ है। जितने आचार्य होगये हैं, सबने इसी गुत्थीको सुलझानेका प्रयत्न किया है। परमात्माका स्वरूप सत्--चिद्—आनंद मय मानते हुए भी संसारका सृष्टा—कर्ता—हर्ता मानना एक ऐसी भूल है जिसके कारण संसारी प्राणी को पद पद पर 'दुख भोगना' पडता है। ज्ञानावरणादि आठ कर्मों से विमुक्त

ज्ञान दर्शन बल सुख मय आत्मा जब हो जाता है तब परमात्मा कहलाता है। वह संसारको बनाता है, बिगाडता है, सुख दुख देता है आदि बातें बनाकर स्वयं स्वछंद हो जाना, अपने हाथ अपने पैर कुल्हाडी मारना है। जिसका कुछ भी संबंध संसार के साथ नहीं है उसके शिर संसार का कर्ता हर्ता होनेका दोष लगाना महान् अपराध है। संसार की इसी अज्ञानता को दूर करने का प्रयास इस पुस्तक में किया गया है। संसार के प्राणियों को समझाया गया है कि—अपने भले बुरे कर्मोंके करनेके तुम खुद जिम्मेदार हो। अच्छा काम करोगे तो अच्छा फल--सुख तुम पाओगे, बुरा काम करोगे, तो बुरा फल दुख तुम भोगोगे। जैसा बीज बोओगे वृक्ष भी वैसा ही उगेगा और वैसे ही फल भी लगेंगे। इस तरह बुरे भले फल तुम ही पैदा करते हो।

अपनी जिम्मेदारी समझ जाने पर मनुष्य बुरे कर्मों से भय खायेगा, तो उन्हें नहीं करेगा। सुखकी अभिलाषा से अच्छे अच्छे काम करेगा। राग, द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ, हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार, तृष्णा इन ११ ग्यारह पापों के अधीन होकर ही यह जीव दुख का सामान तैयार करता है और इनका नाश कर देने से ही अनंत सुखका स्वामी बनता है। यह श्रद्धान हो जाने के बाद ही आत्मा परमात्मा बननेकी तरफ आकृष्ट

होता है । इसलिये सरल मनोहारी भाषामें लालाजी ने इस पुस्तक को लिखकर और प्रकाशित कर महोपकार का काम किया है।

ईश्वर या परमात्मा को संसार का कर्ता हर्ता मानने वाले दुनिया में अरबों खरबों आदमी हैं और वे अपनी संतान को भी-पद पद पर यही शिक्षा देते रहते हैं जो कुछ भला बुरा करता है, ईश्वर ही करता है जितने पदार्थ हैं, ईश्वर ने बनाये हैं, पेड का एक पत्ता भी हिलता है तो ईश्वर की मरजी से हिलता है आदि। इसलिये समस्त दुनिया की समस्त भाषाओं में ऐसी पुस्तकों के प्रचलित होनेकी जरूरत है।

श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ
(गृहविरत ब्रह्मचारी)
महामंत्री
श्री शांतिसागर जैन सिद्धांत प्रकाशिनी संस्था
श्री शांतिवीर नगर, पोष्ट—श्रीमहावीरजी (राजस्थान)

खुश खबर

लाला कुड़ूमलजीने इसी साल चैत्र २०२१ में नीचे लिखा दान देकर अपनी धार्मिकताका परिचय दिया है---

७०००) श्री आदर्श महिला विद्यालय श्रीमहावीरजी [राजस्थान] में विशाल कमरा बनवाने के लिये

२१००) उक्त विद्यालयके ध्रुव फंडमें

२७०१) श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिरजी पहाड पर संगमरमरका फर्श लगाने तथा ४१ नं० वेदीमें बिजली लगानेके लिये

श्रीशांतिसागर जैनसिद्धान्तप्रकाशिनीसंस्था

उद्देश्य और परिचय

यह सुप्रसिद्ध आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज की स्मृतिमें स्थापित है। इस का उद्देश्य समस्त जैन अजैन समाज में दिगम्बर जैन धर्म के उद्देश्यों का प्रचार करना है। इस उद्देश्य के अनुसार वर्तमान में यह संस्कृत प्राकृत जैन शास्त्रों का हिन्दी अनुवाद अपने प्रेस में छपाकर प्रचार कर रही है।

"श्रेयोमार्ग" मासिक पत्र धार्मिक लेखों से विभूषित निकाल रही है। इस संस्था का निजी भवन श्रीमहावीरजी में गंभीर नदी के पूर्व तट पर सडकके पास अवस्थित है।

त्यागी व्रती संसारसे विरक्त पुरुषों के लिये एक विद्यालय स्थापित करनेकी योजना विचाराधीन है।

आप जैन धर्मका प्रचार करना चाहते हैं तो इसके सहायक बनिये निरीक्षण कीजिये, और एक आदि जैन ग्रंथ प्रकाशित करा कर विना मूल्य अथवा अल्प मूल्य से वटवाईये।

व्रति विद्यालय के लिये भवन में एकादि कमरा बनवा कर सहायता कीजिये।

अन्तिम जीवन में शांति प्राप्त करने के लिये स्वयं व्रती बन कर यहां निवास कीजिये और जैन शास्त्रों का अर्थ विद्वानों से सुन कर पढ कर आत्मकल्याण कीजिये।

ब्रह्मचारी श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ

महामंत्री

श्रीशांतिसागर जैन सिद्धांत प्रकाशिनी संस्था

श्रीशांतिवीर नगर

श्रीमहावीरजी (राजस्थान)

श्रीमान् ला० कुडुमल

आयु ७७ वर्ष

जन्म दिन

मिती भादों सुदी ४ सं० १९४४

ता० २२ अगस्त सन् १८८७

ओं नमः सिद्धेभ्यः

इस पुस्तकके लेखक
और
विना मूल्य प्रचारक
लाला कुडुमलजी का परिचय ।

देहली से पश्चिम दिशाकी ओर १०२ मील की दूरी पर फिरोज शाह तुगलक के समय से हिसार नगर बसा हुवा है । सन्-१९१४ में बम्बई से प्रकाशित अखिल भारत वर्षीय दिगम्बर जैन डाइरेक्टरी से पता चलता है कि यहां पर जैनोंके बसानेमें ला० कुडुमल जी के पिता श्री जुगलकिशोरजी के पूर्व-जों [श्रीकल्याण सिंहजी इनके पुत्र श्रीशम्भू-नाथ इनके पुत्र श्री प्रेमसुख इनके पुत्र श्री अजबसिंह इनके पुत्र श्री रामूमलजी] का ही सबसे अधिक हाथ रहा है ।

श्री अजबसिंह के दो पुत्र रामूमलजी व नानकचंदजी हुवे यहां से इनके खानदान का "रामूमल वाला" नाम पडा। इसमें श्री रामूमलजी हिसारमें ही रहे और श्रीनानकचंदजी हांसी जाकर बस गए।

रामूमलजी बडे धर्मात्मा थे। उन्होंने आपने द्रव्यसे एक श्री दिगम्बरजैनमंदिर बनवाया, जो छोटा मंदिर जीके नामसे हिसार में प्रसिद्ध है। यहां आप नित्य नियम से पूजन किया करते थे। इसका प्रबंध भी रामूवालों और शोले वालों के (रामूमल जी की लडकी ला० शोलाल जी को व्याही थी इसलिये यह शोले वाले कहलाए) ही हाथों में है।

रामूमलजी के वृन्दावन व ज्वालादत्त दो पुत्र हुवे। वृन्दावन जीके कोई सन्तान नही हुवी। इन्होंने ज्वालादत्तके बडे पुत्र कन्हैयालालको दत्तक [गोद] लेलिया। ये बडे

व्यापारकुशल और धर्मात्मा व्यक्ति थे। इन्होंने अपने पुरुषार्थ से तीन गांव मोल लिये इन के चार पुत्र हुवे, जिनमें हरगुलाल जी सब से वडे थे, इनके भी कई सन्तानों में ला० जुगलकिशोरजी ही जीवित रहे। धर्मके प्रताप से लक्ष्मी और जायदाद की बढोतरी होते होते आप की गणना अपने समय के सबसे वडे रईसोंमें होने लगी। सामाजिक तथा धार्मिक कामोंमें आप हमेशा आगे रहते थे। दान के अवसर पर आप ही सबसे प्रथम चंदे के चिट्ठे को अपना नाम भरकर शुरू करदिया करते थे। इन्होंने भी अपनी जायदाद की अच्छी तरक्की की, पूजन व शास्त्र सभामें आपकी अच्छी लगन थी। बाबू न्यामतसिंहजी सेक्रेटरी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड हिसार [जिन्होंने मैनासुन्दरी व कमलश्री आदि अनेक नाटक, विलास, चरित्र, भजन और बहुत सी पुस्तकें लिखी थीं जो उस वक्त के

कवि जगत के सितारे थे] की शास्त्र सभामें आप नित्य प्रति जाया करते थे, इनका जीवन धर्मात्माओं में अग्रणी था।

ला० जुगलकिशोरजीकी अनेक सन्तानों में ला० कुड्डुमल जी ही जीवित रहे। आप का जन्म ता० २२ अगस्त सन् १८८७ ईस्वी मिती भादों सुदी ४ सम्वत् १९४४ को हुआ आप को पढाई के साथ खेलोंका भी अच्छा शौक रहा। सन् १९०५ में जब आप मैट्रिक में थे तब देहली कमिशनरी के सात जिलों में सबसे प्रथम रहकर चैंपियन प्राईज [सर्वोत्कृष्ट पारितोषक] प्राप्त किया। आप का जीवन बडे रईसी ठाट से बीतता रहा तथा आप की गिनती भी कदीमी लैंडलार्ड रईसों [कुलक्रमागत जमीन्दारों] में ही रही। इस समय आप के तीन पुत्र हैं जो सब एक से एक सज्जन हैं, प्रथम बाबू सूरजभान जी वकील जो एम. ए० एल. एल. बी हैं। आपकी शादी

नजीबाबाद के साहु सलेखचन्दजीके खान्दा-नमें-जिसमें रायबहादुर साहु जुगमन्दर दासजी जैन हो चुके हैं और इस समय साहु शांति-प्रशाद जी जो डालमिया जी के दामाद हैं उनके चाचा साहू विमलप्रशाद जी की सुपुत्री श्रीमती देवी से हुई है। दूसरे पुत्र श्री कैलाशचंदजी जो कि किन्हीं कारणों से एफ. ए. से आगे नही पढ सके, इनकी शादी पहाडी धीरज देहली में ला० जग्गीमल जी की सुपुत्री पुष्पा देवी से हुवी है। लाला जग्गी मलजी बडे परोपकारी धर्मात्मा श्रावक थे आप धार्मिक कामों में सदैव अग्रेसर रहते थे, उन की फर्म का नाम रामगोपाल संतलाल था इस वक्त उनके खानदान में श्री हेमचन्दजी हैं जो हिसारटेक्सटाईल मिल में जनरल मैनेजर हैं और इनके ही खानदानवालों ने राजा टायज कम्पनी नामक कारखाना जो देश भर में मशहूर है, देहली में खोला हुआ है। तीसरे सुपुत्र श्री सुरेंद्रकुमार जी,जो होशयार

पुर पंजाब से एम. एस्. सी. फर्स्ट डिवीजन पास करके विलायत जाकर ग्लासगो युनि-वर्सिटी की पी. एच. डी. डाक्टर ओफ फिलोसफी की डिगरी हासिल कर चुके हैं आपकी शादी देहलीमें रायबहादुर ला० नन्दकिशोर जी के सुपुत्र ला० सुमतिकिशो-रजी, जो आज कल देहरादून में चीफ इंजी-नियर हैं जिन्हें सरकार की ओरसे पद्मश्री का खिताब मिला है, उनकी सुपुत्री सुनीता देवी बी. ए० से हुवी है।

ला० कुडुमलजी का रईसी जीवन होते हुवे भी बाबू न्यामतसिंहजी की शास्त्र सभा में जानेके फल स्वरूप आपके हृदय में धार्मिक भावोंका समावेश निरन्तर होता रहा। बाबू न्यामत सिंहके स्वर्गवास के समय आप बहुत विकल हुवे और कहने लगे कि अब शास्त्र ज्ञान कहां से मिलेगा ? आपको पावन तीर्थराजोंके दर्शनोंका भी अच्छा प्रेम रहा है। कई कई मास तक अपनी धर्म-

पत्नी श्री शोबाई के साथ आप तीर्थयात्रा कर चुके हैं। सन् १९४७ के भारत विभाजन के नर संहार को देखकर आप बडे दुखी हुवे तब संसार की असारता का बोध कर तीनों पुत्रोंमें अपनी सम्पत्तिका विभाजन कर और अपने लिये स्वतंत्रतापूर्वक दान पुन्य तीर्थ यात्रा कर सकने के हेतु कुछ द्रव्य रख कर आपने धर्मध्यान की ओर विशेष रूप से मन लगाया।

आप दूसरी बार श्री १००८ गोमटस्वामी के महामस्तकाभिषेक के दर्शन कर जैन बद्री से वापिस आये तब पूर्वजों के बनवाये श्री छोटे मंदिर जी में भीतर बाहर दालानों में संगमरमर के फर्श आपने और आप की धर्मपत्नी श्री शोबाई जीने लगवाये तथा ऊपर की मंजिल में एक सुन्दर नवीन वेदी का निर्माण कराके उस पर भी बाहर भीतर संगमरमर के फर्श लगवाये जिसके बनने से स्त्री समाजको पूजनका आराम होगया।

आपने जैन औषधालय जैन कन्यापाठशाला में भी अनेक वार दान दिया तथा पारितोषिक बांटा। लाला जी की धर्मपत्नी जी बडे सरल स्वभाव की मिलनसार महिला हैं, आप दैनिक पूजन करती हैं, आपके सहयोग से स्त्री समाज में अच्छी धार्मिक जागृति रहती है आजकल इन दोनों का जीवन बडा सरल तथा धार्मिक रीतिसे चल रहा है, ७७ साल की आयु तथा भरे पूरे परिवार के बीच रहते हुवे भी आप अंतरंग से उदासीन रहते हैं, संसार और आत्माके स्वरूप को विचारते रहते हैं, यति नैनसुख दास तथा अन्य और अनेक कवियों के भजन साठ सत्तर की संख्यामें आपको याद हैं। जिस समय तन्मय होकर आप उनको गाते हैं उस समय मालूम होता है कि आप आत्मरसमें मगन हो रहे हैं आपने इन भजनों से प्रभावित होकर टैप रिकार्डर मशीन द्वारा पचासों भजन तथा तत्त्वार्थ

सूत्रजी और श्रीभक्तामरजी आदि के रिकार्ड स्वयं गाकर भरे हैं जिन्हें समय समय पर जलसों में तथा श्री मंदिर जी में श्रोतावों को सुनवाया करते हैं।

सन् १९५९ फरवरी में श्री हस्तिनापुर तीर्थराज में मानस्तम्भ प्रतिष्ठाके अवसर पर आप सपत्नीक गए वहां सबसे प्रथम आपने १५०१ की बोली लेकर रथोत्सवका श्रीगणेश किया फिर जन्मकल्याणकके दिन ३२०१रु० की ईशान इंद्रकी बोली ली। अगले दिन गुरुकुल के जलसे के आप सभापति बने तब आपकी धर्मपत्नी श्री शोबाई ने १००१ रु० का दान दिया। सबसे सुन्दर प्रभावशाली वातावरण उस समय रहा जब रात्रिको शास्त्र सभाके पश्चात् जन समूहके बीच आपने आध्यात्मिक पदोंको बडी तन्मयताके साथ गाया। उससमय जनता आत्मविभोर होगई। आपकी बहिरंग लक्ष्मी और दानशीलता

के साथ साथ अन्तरंग आत्मरस के रंग का संयोग आपके जीवन को इतना मधुर तथा अनुकरणीय बनाये हुवे है जो सराहनीय है।

अब आप अधिकांश समय इसी धुन में रहते हैं कि संसार के प्राणियों को सम्यक् दर्शन की प्राप्ति हो। संसारी जीव कर्म के जाल में जकडे हुवे हैं, किसी प्रकार उन्हें सम्यग्ज्ञान हो और अपनी भूल मालूम हो। इसी भावना को लेकर अपनी बुद्धिके अनुसार सरल शब्दों में अपने सुन्दर विचारों को लेकर आपने "आत्म कल्याण मार्ग" और "संसार का नक्शा" जो आपके हाथों में है, इन दोनों पुस्तकों को लिख कर प्रकाशित कराया है। इनकी भावना है कि इन्हें हर एक व्यक्ति पढे और अपना सुधार करे। आपके ज्ञान प्रसार तथा जन कल्याण की भावना आपके सुन्दर भविष्य को बतला रही है कि आप निकट भव्य हैं। इतने विभवसम्पन्न होते हुवे भी

आज के युग में संसार और भोगों से आपकी पूर्णतया अरुचि हो चुकी है वह अवश्य आपका उत्थान करेगी। श्रीमद्देवाधिदेव श्री जिनेन्द्र देवसे यही प्रार्थना है कि आप अपने अगले जीवन में मोक्षमार्ग के पथिक बनें और निराकुल आत्मानंद की प्राप्ति करें।

प्रेमसागर जैन

पुस्तक परिचय

इस अनन्त आकाश में यह संसार जिस को तीन लोक कहते हैं, तीन भागों में बटा हुआ है, सबसे नीचे अधोलोक है जिसको नरक कहते हैं। इसमें अत्यन्त पाप करने वाले जीव उत्पन्न होते रहते हैं वे नारकी कहलाते हैं और सागरों पर्यंत कालतक अपने खोटे कर्मोंके अनुसार महा दुःख भोगते रहते हैं।

अधोलोकके ऊपर दूसरा भाग मध्य लोक वा तिर्यक् लोक अथवा मनुष्य लोक कहलाता है। यह अधोलोकके ऊपर है। यह संसार की दूसरी मंजिल है।

इस लोक में मनुष्य और तिर्यंच जीवोंका तथा भवनवासी और व्यन्तर देवोंका निवास स्थान है। मध्य लोक के ऊपर के हिस्से पर आकाश में सूर्यमंडल, चंद्रमंडल आदि ज्यो-तिषी देवोंके स्थान हैं। इस मध्य लोकमें भी सर्व जीव अपने शुभ और अशुभ कर्मोंके

अनुसार सुख दुःख भोगते रहते हैं।

मध्य लोकके ऊपर वाली तीसरी मंजिल को ऊर्ध्व लोक कहते हैं, जो स्वर्ग लोक कहलाता है। इसलोक में जीव के पुण्य फल से उत्तम भोग और उपभोग की उत्तम सामग्री प्राप्त होती रहती है। इस ऊर्ध्व लोक में स्वर्गों से ऊपर और कई स्थान मंजिल दर मंजिल चले गए हैं। जहां पर जीव के अपने बहुत ज्यादा पुण्य फल से अधिकाधिक सुखों की प्राप्ति मिलती रहती है। इन सब स्थानों में स्वर्गों से लगाकर ऊपर तक देवतावों, इन्द्रों, अहमिंद्रों के रहने के स्थान बने हुये हैं। इन सबके ऊपर ऊर्ध्व लोकके अन्तिम भाग में मुक्त जीवों के रहने का स्थान है जिसको सिद्ध शिला अथवा मोक्षस्थान कहते हैं। इस प्रकार इन तीनों लोकों में अनन्त प्राणी अनादिकाल से चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करते हुये नये नये शरीर धारण करते

हुये अपने पाप पुण्य रूप कर्मों के अनुसार फल भोगते रहते हैं। उनमें जिन भव्य जीवों का संसार से छूटने का समय निकट आजाता है, और उनके पुण्यसे संत साधुओं का उपदेश मिलता है, वे अपने पुरुषार्थ के द्वारा व्रत संयम और तप को पालते हुये कर्मों के बंधनको ढीला कर देते हैं। उस हालत में सम्पूर्ण कर्मोंका नाश करने से उनको मोक्ष लक्ष्मी प्राप्त होजाती है यही इस जीवकी परमात्म अवस्था है।

परमात्मा का और कोई पद न्यारा नहीं है और न वह संसार का कर्ता हर्ता है। वह तो परम शांत और निर्विकल्प अवस्था को प्राप्त हो चुका है। इसी को ईश्वर अथवा परमात्मा कहते हैं।

अगर आप हमेशा के लिये सुख, और शांति प्राप्त करना चाहते हैं और जन्म मरन के चक्कर से छूटना चाहते हैं तो,

।। आत्मा से परमात्मा बनो ।।

सत्यको ग्रहण करो और मिथ्यातको दूर करो ११ प्रकार के चोरों अर्थात् १ राग २ द्वेष ३ हिंसा ४ चोरी ५ झूठ ६ कुशील ७ परिग्रह ८ क्रोध ९ मान १० माया ११ लोभ का परित्याग करो यही हमारा परम धर्म और कर्तव्य है।

आत्मा दो प्रकारका होता है—

अशुद्ध आत्मा और शुद्ध आत्मा।

जो आत्मा अनादिकाल से ११ प्रकार के चोरों के मैल से लिपटा हुवा जन्म मरन करता हुआ, शुभ और अशुभ कर्म करता हुआ उसके अनुसार सुख दुःख भोगता हुआ चौरासी लाख योनियोमें भ्रमण करता हुआ, नये २ शरीर धारण करता हुआ तीन लोक में चक्कर लगाता फिरता हो उसको अशुद्ध आत्मा कहते हैं। यही अशुद्ध आत्मा ईश्वर के रूप को छिपाये हुये, शरीर धारण किये,

गले में कर्मोंका हार पहनेहुये, कौतुकी बना हुवा संसार को नाटक दिखला रहा है। यही संसार का कर्ता हर्ता बना हुआ है।

जो आत्मा ११ प्रकार के चोरोंकी, कर्मोंकी मैल से और संसारकी सर्व प्रकारकी क्रियावों, इच्छावों, चिंतावों, झगडों, झंझटों, संकल्प विकल्पों से और जन्म मरन के चक्कर से रहित हो चुका है, और सम्पूर्ण कर्मोंका नाश करके मोक्ष पद प्राप्त कर चुका है। उसको शुद्ध आत्मा अथवा परमात्मा कहते हैं। यह जगतका कर्ता हर्ता नहीं है।

इसी बातका स्पष्टी करण इस पुस्तक में किया गया है। संसारी प्राणी 'संसार के सुख दुखोंको देने वाला एक ईश्वर है' ऐसी मिथ्या श्रद्धा कर अपने पुरुषार्थ को काम में नहीं लाता, उसको यथार्थ श्रद्धा कराने के लिये इस पुस्तकका प्रकाशन किया गया है।

भूमिका

आज के भौतिक वादी युग में मनुष्यों की रुचि धन का संग्रह करने की ओर ही अधिक लगी हुई है, परन्तु धन के सद्उपयोग करने की कला को हम भूलते जा रहे हैं। मानव जीवन में धन भी एक बहुत बड़ी शक्ति है, लेकिन उस शक्ति को सही मार्ग पर लगाना अथवा गलत मार्ग पर लगाना उसके दो उपयोग हैं। आज विषय वासनाओं की बढोतरी फैशन तथा शृंगार का प्रचार इतना अधिक हो गया है कि हमारे जीवन में सादगी सदाचार और संयमका अभाव दिन दिन अधिक बढता चला जा रहा है जिसकी वजह से हमारी संतान कमजोर और कायर बन रही है।

आज हमारा भारत वर्ष जो कभी ऋषियों और मुनियोंका देश कहा जाता था

जहां भीमसैन जैसे वलवान और अर्जुन जैसे योद्धा संयमी होते थे, चारो ओर आत्मज्ञान की चर्चायें हुवा करती थीं वहां पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव में आकर हम आत्मा और पुनर्जन्म के विचारों का लोप और दैनिक धर्म कार्यों से उदासीन होते जा रहें हैं। नास्तिकता हमारे जीवन में छा गई है। पहिले जहांपर हम प्रातः काल शय्या का परित्याग करने के पश्चात् स्नान आदि से निवट कर आत्मा की उपासना देव पूजा में लग कर अपने मन और इन्द्रियों को पवित्र बनाते थे, सत्संग और स्वाध्याय के द्वारा बुद्धि का सुन्दर विकास होता था, जीवन सदाचारी और संयमी वनता था, उसका स्थान सिगरेट-चाय-विस्कुट और समाचार पत्रों ने ले लिया है, सवेरा होते ही सेफ्टीरेजर और बूट पौलिश की पेटी खुल जाती है, हम यह भूल चुके हैं कि लौकिक

सुख सम्पत्ति भी सदाचार और धर्म से ही प्राप्त होती है।

हम अपने धर्म ग्रन्थोंको पढें, सत् संग से जीवन निर्माण की शिक्षा लें संसार के स्वरूप का विचार करें, अपने शुद्ध आत्म तत्त्व को पहिचानें, संसार बंधन से छुटकारा पाने का पुरुषार्थ करें यह तो आज के युग में स्वप्न की बात हो गई है हम इस प्रकार की बातों को मजाक समझने लगे हैं। प्राचीन उन्नत भारत में जब कि छोटे छोटे विद्यार्थी भी आत्मविद्या पढते थे, उनके विचार सुन्दर थे, जीवन सदाचारी संयमी था, वह बडे होने पर देश के गुणवान और बलवान नागरिक बनते थे, धर्म कथायें उनके जीवन को पवित्र बना कर ऊपर उठाती रहती थीं। वे ही आगे चलकर महापुरुष बनते थे। आत्म तत्त्वकी ऊंची से ऊंची चर्चाओं में हमारे समय का सद्उपयोग होता था, जीवन में शान्ति था,

सन्तोष था। देश सुखी था । सारा विश्व भारत को आदर की दृष्टि से देखता था।

किन्तु आज विलासिता और आसुरी सम्पत्ति का व्यापक प्रभाव इतना अधिक हो चुका है कि इंसान इन्सान न रहकर हैवान बनता जा रहा है, चारो ओर चोर बाजारी घूसखोरी हिंसाकाण्ड और दुराचार मानव जीवन को नीचे गिराने वाले जरिये वढते चले जा रहे हैं, मांस अन्डा शराव फिल्मी गंदे गाने हमारे जीवन के जरूरी अंग वनने लगे हैं। हम राम के भाई भाई के प्रेमको पिताको भक्ति को, सीताके पातिव्रत धर्मको, कृष्णके गोपालनको, श्रीमहावीरके उत्तमक्षमादि दशधर्मों और अहिंसा धर्मको भूल गये हैं, उनके अनुयायीं होते हुए भी उनके उपदेश को ताक पर रख कर स्वच्छन्द हो अपने जीवन को गन्दा बनाने पर तुले हैं, हम भूलते जा रहे हैं कि हमारे खोटे आचरण,

हमारी विलासिता हमारा तथा विश्व का विनाश कर डालेगी।

हम सारा दोष सारी जिम्मेदारी परम पिता ईश्वर के मत्थे मंढ़ कर अपना बचाव करने की कला में माहिर हैं फिर भला हमें क्या जरूरत पड़ी कि हम अपने जीवन पर गौर करें और अपने को पवित्र बनावें हमने सारा दारोमदार उस परम पिता ईश्वर की मर्जी पर छोड दिया है। इस प्रकार अपने बचाव का एक सुन्दर तरीका निकाल लिया है। इस छोटी सी पुस्तक में इन ही बातों पर विचार किया गया है, हम अपने शुभ कार्यों से अपने घरको अपने जीवन को तथा सारे संसार को सुन्दर और सुखी बना सकते हैं, जब कि गन्दे और हिंसक स्वार्थी विचारों से अपने दुराचरण से स्वयं भी दुखी होकर सारे संसार को गन्दा बना डालते हैं।

आपके हाथों में यह पुस्तक है उसे पढें

और विचार करें अपने आचरण की ओर देखें यदि वह ठीक है तो बडी खुशी की बात है वरना हम उसे सुधारने की कोशिश करें हमें याद रखना चाहिये—मनुष्य स्वयं अपने भाग्य का विधाता है। वह अगर सही दिशा की ओर चले तो परमात्मा बन जाय। और यदि कुमार्गों की ओर चढ़े तो नारकीय दुःखों को भोगने लगे। हम कर्म के रहस्य को समझें जिसने कर्मके सिद्धांत को मान लिया है वह फिर किसी भी परमात्मा से याचना नही करेगा और न किसी दानव से डरेगा। वह जानता है कि उसके अच्छे और बुरे किये हुये कर्म ही उसे सुख दुख देते हैं और यदि इन दोनों प्रकार के कर्मों को त्याग दिया जावे तो परमात्म अवस्था प्रगट हो जावेगी। ईश्वर जगत कर्ता है, सांसारिक सुखों और दुखों का देने वाला है, बिना उसकी मर्जी एक पत्ता भी नही हिल सक्ता जब तक वह

कृपा न करे तब तक हमारा कल्याण नही हो सक्ता इन मान्यताओं ने हमें इतना कायर और ईश्वर का गुलाम बना दिया है कि जीवनको सदाचारी सुन्दर बना कर ऊपर उठने की हमारी भावनायें नष्ट हो चुकी हैं हम अपने हाथ पांव हिला कर पुरुषार्थ करना नही चाहते, ईश्वर की ओर टक टकी लगा कर देखा करते हैं कि वह आएगा और हमारा काम सिद्ध कर देगा। हम स्वच्छंद वन कर पापों की ओर दौडते चले जा रहे हैं, और अपने बचाव के लिये ईश्वर की ऐसी ही मर्जी है, ऐसा बताने लगते हैं। हम सही मार्ग को समझकर चलें, अपने जीवन को उद्योगी बनायें, गंगा के प्रवाह के समान निरन्तर तीव्र पुरुषार्थ करें, तो फिर एक दिन संसार के सुखों को भी प्राप्त कर लेंगे और अन्त में आत्मा के अविनाशी सुख की प्राप्ति कर स्वयं परमात्मा बन जांयगे

परमात्मा कहीं बाहर नही मिलेगा, वह हमारे भीतर है, और हमारा शुद्ध स्वरूप ही पर-मात्मा है।

आप इस पुस्तक को पढ कर लाभ उठायेंगे तो मुझे बडी प्रसन्नता होगी और मैं अपने इस परिश्रम को सफल समझूंगा।

—प्रेमसागर

संसार का नक्शा

जगत कर्ता ईश्वर नहीं है

फिर कौन है ?

संसार के दो बडे प्रधान मंत्री

जीवद्रव्य

और

अजीवद्रव्य

(यही दोनों जगत के कर्ता हर्ता हैं)

यही दोनों संसार के सबसे मुख्य चौधरी अथवा प्रधान मंत्री हैं इन्हों दोनों का यह संसार रचा हुआ है। यही दोनों इसमें काम कर रहे हैं। इनके कामों में परमात्मा का किसी प्रकार का लगाव या दखल नहीं है।

जीवद्रव्य

[दो अवस्थायें]

मुक्त जीव

कर्मरहित शुद्ध-आत्मा
यह शुद्धआत्मा संसार
की सर्व प्रकारकी वस्तु
ओंसे और सर्व प्रकार
की शुभ और अशुभ
क्रियाओंसे अलग
हो कर सम्पूर्ण कर्मों
का नाश करके पर-
मात्मा बन चुका है
अब संसार से उसका
कोई लगाव या दखल
या संबंध नहीं रहा
है इसलिये यह जगत
का कर्ता हर्ता नहीं
है !

संसारी जीव

कर्मरहित अशुद्ध
आत्मा
यह अशुद्ध आत्मा
अभी परमात्मा नहीं
बना है, कर्मसहित है
अशुद्ध और मलीन
है । ईश्वर का रूप
छिपाये हुए, पुद्गल
का जामा पहने हुए
शरीर धारण किये
हुए, कर्मों का हार
गले में डाले हुए अपने
११ प्रकार के खिला-
डियों [राग-द्वेष-

हिंसा– चोरी–झूठ–
कुशील -परिग्रह-क्रोध
मान-माया-लोभ]को
अपना मित्र बनाए
हुए, उनके संग में
होली खेलता हुआ
उनके मीठे मीठे रसों
को चखता हुआ,
और मोह रूपी शराब
के नशे में झूमता हुआ
कौतुक मचाता हुआ
संसार का कर्ता हर्ता
बना हुआ, संसार
को नाटक दिखला
रहा है। अपना
कसूर नहीं मानता

कि मैं संसार का कर्ता
हर्ता हूँ, सारा दोष
परमात्मा के मत्थे
मंढता है कि तू ही
संसार का कर्ता हर्ता
है। यह अशुद्ध जीव
की खासियत है।
और यही संसार का
कर्ता हर्ता है।

अजीव द्रव्य

[पांच प्रकार के हैं]

पुद्गल-धर्म-अधर्म-आकाश-काल

[जीव द्रव्य को मिलाकर षट् द्रव्य कहलाते हैं]

यह संसार की सबसे बडी ६ ताकते हैं । जो संसार में काम कर रही हैं । इन्ही का यह संसार रचा हुआ है । इनके इलावा और कोई सातवीं ताकत नही है। इनके कामों में परमात्मा का कोई लगाव या दखल नही है ।

सुनी समझी बातें तुम्हें फिर सुनाऊं
उसी में नई सूझ सोती जगाऊं।
रीझे अभी तक अनेक कौतुकों से
षटद्रव्य कौतुकों से तुम्हें अब रिझाऊं

अनादि कालसे चले आरहे और अनन्त काल तक चलने वाले इस विचित्र संसार को देखने से मालूम होता है कि कुछ एसी अविनाशी शक्तियां हैं जो इस संसार को चला रही हैं इसको कायम रक्खे हुए हैं तथा इसके भीतर काम कर रही हैं एक होश्यार एक्टर की तरह अपना रूप बदलती रहती हैं जिसकी वजह से संसार के नक्शा का—उसके रंग रूपका रद्दोबदल होता रहता है। वह शक्तियां हमेशा से चली आरही हैं। और इसी प्रकार हमेशा बनी रहेंगी। उनका कभी नाश नहीं होगा। अधिकांश लोगों का ख्याल है कि वह शक्ति ईश्वर है जो सर्व शक्ति-मान है, जिसने इस संसार की उत्पत्ति की है। और वही इसे चला रहा है। आइये आज विचार करें, लोगों का एसा ख्याल कहां तक सही है।

ईश्वर संसार की झंझटों में फंसे, इसकी

रचना करे इसको चलाये और फिर इसका नाश करे ऐसी बात विवेक की बुद्धि के द्वारा विचार करने पर समझ में नहीं आती है। सांसारिक इच्छावों का नाश होने से इस जीव को परमात्म पद की प्राप्ति होती है। सांसारिक झंझटों से छुटकारा या निराकुल शान्त आत्मानंद में मगन होना, कभी किसी प्रकार का संकल्प विकल्पों का पैदा न होना यही परमात्म अवस्था है। फिर ऐसे परमात्मा को क्या जरूरत पडी कि अपनी निराकुलतामें बाधा डाले। अनेक प्रकार की चिंतावों को उत्पन्न करे और संसार के कामों में फंसे।

गहराई से विचार करेंगे तो ज्ञात होगा कि इस संसार को बनाने, कायम रखने और चलाने वाली शक्तियां दूसरी ही हैं जिनको जड और चेतन तथा जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य के नामसे कहा गया है। इन दोनों द्रव्यों

के मेल से यह संसार बना हुआ है। यह अनेक रूपों में बनती बिगडती रहती हैं। इस विशाल संसार का निर्माण करने वाली यह दोनों शक्तियें अनादि काल से चली आ रही हैं और अनन्त काल तक चलती रहेंगी ये दोनों द्रव्य अनन्त शक्तिमान हैं संसार रूपी नाटक घर में इन दोनों का ऐसा जबर-दस्त खेल हो रहा है जिसको देख देख कर लोग हैरान हो जाते हैं। जब समझ में नहीं आता तब हार कर यह कहने लगते हैं कि यह सब ईश्वर की ही माया है। किन्तु ऐसा कहने वाले यह नहीं सोचते कि ईश्वर को संसार की उलझनों से क्या मतलब ?

जीव तथा अजीव, जड और चेतन पुरुष और प्रकृति, ब्रह्म तथा माया अनेक नामों से इन दोनों शक्तियोंको पुकारा जाता है। यही दोनो द्रव्य संसार के कर्ता हर्ता हैं। संसार इन्ही के मेल से बना हुआ है। यही

दोनों संसार के मुख्य चौधरी तथा प्रधान मंत्री हैं। इन्हीं दोनों द्रव्यों ने संसार के राज्य को अटल रूप से चलाने के लिये ११ प्रकार के उपमंत्रियोंको (जिनके नाम यह हैं राग-द्वेष-हिंसा-चोरी-झूठ-कुशील-परिग्रह-क्रोध-मान माया-लोभ) नियुक्त किया हुआ है। जिन्होंने संसारी जीवों को मीठा लोभ देकर अपने जाल में फंसाया हुआ है। और उनके ज्ञान रूपी नेत्रों को फोडकर अन्धा बना दिया है। ताकि वह संसार में ही घूमते रहें। जन्म मरण का चक्कर लगाते रहें और हमारा संसार नाटक इसी प्रकार हमेशा चलता रहे इसमें कभी खराबी पैदा न होने पाये। यदि जीव को अपने आत्मज्ञान का पता चल गया तो फिर यह हमारे जालको तोड कर फौरन मोक्ष महल में भाग जावेगा और हमने जो यह मायावी संसार रचाया हुआ है, बादलों की तरह उड कर खतम हो

जावेगा ।

यह द्रव्य कुदरती हैं—किसी के बनाये हुये नही हैं। समय समय पर इनका रूप बदलता रहता है और इसी प्रकार हमेशा बदलता रहेगा । यह द्रव्य संसार के बडे भारी एक्टर [खिलाडी] और बहुरूपिया हैं संसारको ऐसा ऐसा नाटक दिखला रहे हैं कि बडे बडे ज्ञानी महात्मा इनके नाटक को देख देख कर हैरान हैं, चक्कर खारहे हैं, समझ नहीं पाते कि किस प्रकार इनका खेल खेला जा रहा है। आखिर थक कर बैठ गए और यह कहने लगे कि परमात्मा की माया को परमात्मा ही जाने ।

यह द्रव्य मुख्य रूप से दो ही हैं—

जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य

फिर अजीव द्रव्य के पांच भेद हो जाते हैं—पुद्गल-धर्म-अधर्म—आकाश-काल तथा जीव द्रव्य को मिला देने से सब ६ द्रव्य बन

जाते हैं । यही ६ द्रव्य संसार की सबसे बडी ताकते हैं जो संसार में काम कर रही हैं। इन्ही का यह संसार रचा हुआ है इनके अलावा सातवीं ताकत और कोई नहीं है। किसी की मजाल नही है कि इनके कामों में कोई दखल दे सके या रुकावट पैदा कर सके या किसी प्रकार की तबदीली कर सके घटा सके अथवा बढा सके या खराबी पैदा कर सके या जो होनहार है उसको टाल सके इनके रोजाना होनेवाले कामों को कानून कुदरत कहते हैं कुदरत का नाम लोगों ने परमात्मा रक्खा हुआ है। यह उनकी बहुत बडी भूल है। यह परमात्माका खेल नहीं है। यह कुदरत का खेल है। कुदरत का नाम है जीव और अजीव का खेल। यह दोनो कुदरत हैं किसी के बनाए हुए नही हैं। यहां कहने का मतलब यह है कि कुदरत माने जो किसी का बनाया हुआ न हो, जो अपने आप अनादि

काल से चला आ रहा हो। और ठीक इसी प्रकार अनन्त काल तक चलता रहे। इसलिये इसको कानून कुदरत कहते हैं जिसमें किसी का दखल न हो। अब आगे के लेखमें छः द्रव्योंका अलग अलग कथन किया जायगा।

छः द्रव्यों का वर्णन

जीव द्रव्य—

जीव उसको कहते हैं जिसमें देखने और जानने की शक्ति हो।

जीव की तीन हालते हैं

१ संसारी जीव (बहिरात्मा)
२ मिश्र जीव [अन्तर आतमा]
३ मुक्त जीव [परमात्मा]

अजीव द्रव्य—

उसको कहते हैं जिसमें देखने जानने की शक्ति न हो, इसके पांच भेद हैं, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल।

संसारी जीव [वहिरात्मा]

उन्हें कहते हैं जो अनादि काल से पुद्गल परमाणु रूपी कर्म मैलके मेल से मैले हो रहे हैं, उनके गुण और स्वभाव ढके हुये हैं। जिस प्रकार खान से निकले हुवे सोने में मिट्टी मिली रहती है, किसी ने मिलाई नही है, मिट्टी के मिलने से शुद्ध सोने का रंग रूप दिखलाई नही देता उसी प्रकार जीव कर्म रूपी मैल से अनादि काल से मलीन हो रहा है इस मोही जीवने स्वयं ही इन कर्मों को इकट्ठा किया है और उसमें फंस रहा है मोहनीय कर्म के नशे में अपने शुद्ध स्वरूप ज्ञान आनन्द को भूले हुवे संसार में घूम रहा है कर्मों के बंधन से संसारी जीवों को कैदखाने के रूप में रहने को जो स्थान मिला है उसका नाम शरीर है अपनी अज्ञान तथा मोह जनित अवस्था में इस हाड मांस बने गन्दे शरीर को अपना समझ कर हमेशा शरीर के सुखों और दुखों

को ही देखा करता है अपनी चिदानन्द चैतन्य शक्ति को भूले हुवे है। सुन्दर भोजन वस्त्र धन मकान स्त्री पुत्रों के मोह में फंसा उन्हें संग्रह करने की कोशिश करता रहता और शरीर को दुख देने वाली चीजों से घृणा द्वेष करने लगता है, उनको अपना शत्रु समझता है। इस प्रकार यह संसारी जीव शत्रु और मित्र का ताना बाना बुन कर, राग-द्वेष क्रोध-मान-माया-लोभ-हिंसा-चोरी-झूठ-कुशील परिग्रह इन ग्यारह कर्मों को हमेशा किया करता है और अपने फंसने के लिये कर्मों का जाल तैयार करता रहता है। जब तक सच्चे गुरु की संगति नहीं मिलती तब तक संसार के दुःखों और सुखों को सच्चा मानता रहता है। सौभाग्य से यदि सतसंग करे और इसके ज्ञानरूपी नेत्र खुलें तब इसको अपने असली आत्मस्वरूप का पता लगता है तब इसकी वृत्ति सांसारिक भोगों से उदासीन

होती है और अन्तर आत्मा बनने की कोशिश करता है।

मिश्रजीव [अन्तर आत्मा]

जिन बुद्धिमान स्त्री पुरुषों ने सन्त समागम तथा स्वाध्याय से जीव तथा अजीव का भिन्न भिन्न बोध प्राप्त कर लिया है कि यह हाड मांसका शरीर पुद्गल परमाणु-ओं का पिण्ड है। मैं शुद्ध चैतन्य अवस्था का धारी जीव इसमें फंसा हूं। मेरे अच्छे व बुरे कर्मों के बंधन से ऊंचा कुल सुन्दर बलवान शरीर तथा नीच कुल, रोगी और कुरूप शरीर अथवा शारीरिक सुखों और दुखों की सामग्री मिलती और बिछुडती रहती है। मोहरूपी शराबसे मोहित होने की वजह से मैं शारी-रिक सुखों को सुख और दुखों को दुख मान रहा हूं जिनको ऐसा विश्वास हो चुका है वे फिर शरीर स्त्री पुत्रों धन सम्पत्ति को अपना नही समझते, संसार से उदासीन रहते हैं धीरे

धीरे मोह ममता का नाश करते हुवे घर बार को भी छोड देते हैं, उनका मन सांसारिक विषयों से उदासीन हो जाता है। शरीर और संसार से उनकी मोह ममता हट जाती है। मन और पांचों इंद्रियों को वह अपने बसमें कर लेते हैं। कर्मरूपी मैल का नाश कर अपनी आत्म शुद्धि के लिये एकान्त स्थानों में जंगलोंमें पहाडोंकी गुफावों में रहते हैं उनके अन्दर शत्रु मित्र के भावों का उदय नहीं होता। शान्ति व वैराग्य बढाने वाली बातों को वह अच्छा समझते हैं। शरीर रक्षा के लिये रूखा सूखा जैसा भी मिलगया भोजन लेकर उसमें अपना निर्वाह करते हैं। उनका सम्पूर्ण जीवन आध्यात्मिक शास्त्रों को पढने में और आत्म चिन्तन में व्यतीत होता है। संतोष सरलता और परोपकार उनके जीवन के अंग बन जाते हैं। दया अहिंसा क्षमाका पालन करते हुवे कर्म बन्धन को ढीला करके

परमात्मपदकी ओर वह बढने लगते हैं।

शुद्ध जीव [परमात्मा]

सम्पूर्ण कर्मों तथा इच्छाओं का नाश कर शरीर रूपी कैदखाने से हमेशा के लिये अपने को मुक्त करके परमात्म अवस्था को प्रगट करलेना दुवारा जन्म मरण के चक्कर में नहीं फंसना यह पूर्ण शुद्ध परमात्म अवस्था है। साधु पुरुष संसार तथा शरीर से विरक्त हो त्याग तप और इन्द्रिय तथा मन संयम के द्वारा, मनको वश में करते हुये सम्पूर्ण वासनाओं का नाश कर देते हैं शुभ और अशुभ दोनों भावों का त्याग कर शुद्धात्म साधना में लीन हो जाते हैं उनकी आत्मा में नये कर्मों का आना रुक जाता है, पुराने कर्म नष्ट होने लगते हैं इस प्रकार उनकी आत्मशुद्धि होने लगती है। धीरे धीरे आत्म ध्यानरूपी अग्नि में सम्पूर्ण कर्म मैल जल कर परमशुद्ध वीतराग अवस्था प्रगट हो जाती

है। अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख अनन्त वीर्य आदि गुणों का प्रकाश हो जानेसे शुद्ध परमात्म स्वरूप तीन लोक का ज्ञाता दृष्टा बन जाता है। जन्म मरण के चक्कर का हमेशा के लिये खात्मा हो जाता है वह सर्वज्ञ केवलज्ञानी बन अपने निज आत्मिक सुखों को भोगते हुवे राग-द्वेष रूपी विकारों से सर्वथा अलग रहते हैं।

जिस प्रकार खान से निकाला सोना अनादि काल से मिट्टी से मिला हुवा है उस में किसी ने मिट्टी मिलाई नहीं है किन्तु सुहागा नोसादर आदि मसाले अथवा गन्धक आदिके तेजाब के साथ अग्नि में तपाकर सोलह ताव देने के बाद मिट्टी अलग हो जाती है और शुद्ध सोना अलग निकल आता है ठीक इसी प्रकार त्यागी महात्मा ज्ञान और वैराग्य के मसाले से ध्यान रूपी अग्नि में सम्पूर्ण संकल्पों विक

लपों का अभाव कर एकाग्रता पूर्वक अपनी आत्मा को शरीर और कर्मों के जालसे मुक्त कर शुद्ध परमात्मपद की प्राप्ति कर लेते हैं इसी का नाम परमात्मा है।

पुद्गल द्रव्य—

वे रूपी पुद्गल परमाणु जो जड हैं जिनमें चेतना और जानने देखने की ताकत नही है, सारे संसार में ठसाठस भरे हुये हैं प्रत्येक परमाणु में स्पर्श-रस-गंध-वर्ण ये चार गुण पाये जाते हैं। शरीर को छूने से जो वस्तु का ज्ञान होता है उसे स्पर्शन इन्द्रिय जनित स्पर्श ज्ञान कहते हैं इसके आठ भेद हैं ठंडा—गरम—हलका—भारी-कठोर—मुलायम-चिकना खुरदरा। रस उसे कहते हैं जो जीभ से चख कर जाना जाय, इसके पांच भेद हैं खट्टा मीठा-नमकीन-कडवा-चरपरा, गन्धके दो भेद हैं। सुगन्ध और दुर्गन्ध जो नासिका इन्द्रिय का विषय है। वर्ण तथा रूप यह पांच हैं जो

आंखों से देखा जाना जाय इसके पांच भेद हैं सफेद-हरा-काला-लाल-नाला। इनके मेल से और भी अनेक प्रकार के रंग बन जाते हैं यह सब पुद्गल परमाणुओंके गुण हैं। परमाणु सारे संसार में भरे हैं किंतु इतने सूक्ष्म हैं जो दिखाई नही देते।

रेडियो और टेलीवीजन स्टेशनों से जो सुनाई जाती हैं नाच गाने गाये जाते हैं उनकी तरंगें अदृश्य रूप से सारे संसार में भर जातीं हैं जिन्हें हम देख नही सक्ते किन्तु रेडियो और टेलीविज़न सेट का बटन दबते ही उस में वह सारे नाच और गानें सुनाई तथा दिख-लाई देने लगते हैं। विचार कीजिये हजारों तरह की आवाजें नाच रूप रंग के दृश्य सब अलग अलग सम्पूर्ण आकाश मण्डल में फैले हुये हैं किन्तु जिस गाने की आवाज और दृश्य को आप देखना सुनना चाहें बटन दबाते ही सामने आजायगा ठीक यही हाल

पुद्गलपरमाणुओंका है जो सूक्ष्मरूपसे अनन्त आकाशमें ठसाठस भरे हुये हैं इतने सूक्ष्म हैं जो किसी भी इन्द्रियके द्वारा जाने और देखे नही जा सक्ते, किन्तु जब वह घन रूप से मिल कर इकट्ठा होते हैं स्कन्ध बनते हैं तब अनेक ठोस और तरल पदार्थों के रूप में दिखलाई देने लगते हैं और फिर बिखर जाते हैं कोई तत्काल बनते और बिखरते हैं जैसे बिजली की चमक बादलों के रंग उन को गडगडाहट। कोई अधिक दिनों तक महीनों वर्षों तक शताब्दियों तक बने रहते हैं फिर बिखर जाते हैं जैसे पहाड़, अनेक जीवों के शरीर, लकडी पेड पोदे, लोहा कोयला कपडा आदि अनेक प्रकार की गंध, रूप, रंग आवाजें। ये सब जो भी कुछ आंख नाक कान जीभ और हाथ से छूकर देखने, जानने, सूंघने चखने और सुनने वाली वस्तुयें जो सब पांचों इन्द्रियों के द्वारा ग्रहण की

जाती हैं वह सब पुद्गल परमाणुओं के मेल से ही बनी हैं। जो हमेशां बदलती बनती बिगडती रहती हैं।

आप सिनेमा के पर्दे को ही लीजिये एक दम साफ सफेद होता है किन्तु सामने से फिल्मों की तसवीरों को रोशनी के द्वारा फेंका जाता है तो वहां अनेक प्रकार के खेल तमाशे चलती फिरती बोलती एक नई दुनियां नजर आने लगती है आप विचार करें उस साफ पर्दे पर कुछ नही है, किन्तु रंगीन फिलमों को रोशनी के फोकस से जब परदे के ऊपर फेंकते हैं तो उस परदे पर एक नया संसार ही नजर आता है। इसी प्रकार पुद्गल का खेल सारे संसारमें होरहा है। जिस प्रकार जीव द्रव्य अनन्त शक्तिमान है उसी प्रकार पुद्गल परमाणु भी अनन्त शक्तिमान हैं। आज विज्ञान के द्वारा इसकी शक्ति सारे संसार में प्रगट हो रही है परमाणुबम—हाई-

डरोज वम–राकट विजली की मशीनें इनके द्वारा चलने वाले सब प्रकार के कारखाने विजली की रोशनी व विजली के पंखे व रेल गाडियां जो विजली से भी और कोयले की आग और पानी की भांप से भी चलती हैं पानी के जहाज जो पानी पर चलते हैं हवाई जहाज जो आकाश में तेज रफतार से चलते हैं। संसार की सब प्रकार की वस्तुयें जो आंखों से दिखाई देती हैं इनके अतिरिक्त सूर्य्य की गर्मी से समुद्र का पानी भांप वन कर आकाश में वादलों की सूरत में फिरते रहना ज्यादा गहरे बादल वन जाने पर बादलों का खूब जोरों के साथ गर्जना विजली का चमकना वारिश का होना आकोश में ओले बन कर जमीन पर गिरना इत्यादि जितने भी चमत्कार आपको दिखलाई देते हैं यह सबके सब पुद्गल परमाणुओं के ही बने हुवे हैं यही संसार में काम

कर रहे हैं। परमात्माका इन कामोंमें कोई दखल नहीं है। अब मैं पुद्गल परमाणुवों का दूसरा चमत्कार पेश करता हूं जब यह पुद्गल परमाणु जीव के शुभाशुभ कर्मोंके अनुसार कर्म रूप बनकर जीव के साथ लगते हैं और अपना फल देते हैं तब यह एक विशाल रूप धारण करते हैं। जीव का जन्म मरण कराना, चौरासी लाख योनियों में भ्रमण कराना, नये नये शरीर धारण कराना, सुख दुख देना, यह सब काम पुद्गल के बने हुवे कर्मरूपी परमाणुवोंका है, परमात्मा का इन कामों से कोई ताल्लुक नहीं है। इन पुद्गल परमाणुओं के कामों को समझना देखना जानना यह साधारण मनुष्यों का या ज्ञानी महात्माओं का काम नहीं है बल्कि इनके कामों को अनन्त ज्ञान धारी केवली भगवान ही देख सक्ते हैं और जान सक्ते हैं।

धर्मद्रव्य—

उसे कहते हैं जो जीव और पुद्गल को हलन-चलन करनेमें सहायता दे। आजके वैज्ञानिक जिसे ईथर कहते हैं उन के कथनानुसार ईथर के दो भेद हैं इनके सहारे रेडियों की तरंगें चलती और रुकती हैं ईथर सम्पूर्ण आकाश मण्डल में फैला है इसी प्रकार धर्म द्रव्य के सहारे जीव व पुद्गल परमाणु गति करते हैं सम्पूर्ण संसार में इधर उधर दौडते हैं। यदि यह द्रव्य न हो तो वस्तु जहां है वहां से हिल नही सकी।

अधर्म द्रव्य—

वह है जो जीव और पुद्गल परमाणुओं को एक स्थान पर ठहरनेमें रुकनेमें सहायक हो। यदि यह द्रव्य न हो तो फिर जीव और पुद्गल हमेशां भागते हुये चक्कर ही लगाते रहें, कभी कहीं रुक नही सकते आप इस द्रव्य को दूसरे ईथर के रूप में जो

रेडियो की तरंगों को रुकने में सहायता करता है उसके समान समझें।

आकाश द्रव्य—

वह द्रव्य है जो इस संसार का सबसे बडा सिनेमा हाल है। यह पोला है सम्पूर्ण द्रव्योंको अपने में स्थान दे रहा है। जीव और पुद्गल द्रव्य इस आकाश द्रव्य के भीतर स्थान पाकर अनेक प्रकार के खेल व नाटक कर रहे हैं। यदि आकाश न हो तो इन द्रव्यों को रहने के लिये कहीं जगह नहीं मिलेगी।

काल द्रव्य—

यह द्रव्य भी अपनी एक विशेषता रखता है। जीव और पुद्गलकी हालतोंको वद-लने में जो समय लगता है, यह काल द्रव्य का काम है, बच्चा पैदा हुवा धीरे २ बडा हुवा जवान हुवा फिर वृद्धावस्था को प्राप्त हो गया, इसी प्रकार वृक्ष आदि अनेक

वस्तुओंको देखिये, पहिले अंकुर फूटा धीरे २ पौदा वना, वड़ा होकर पेड वन गया यह सब अनेक हालतें जीव और पुद्गल की बदलती और बिगडती रहती हैं, वे काल द्रव्य की मदद से ही होती हैं यदि यह द्रव्य न हो तो जीव और पुद्गल द्रव्य संसार के सब पदार्थ एक ही अवस्था में हमेशां बने रहेंगे उनकी अवस्थाओं में परिवर्तन नहीं हो सकेगा घन्टा, मिनट, सेकिन्ड, महोना और वर्ष यह सब काल के भेद हैं।

उपरोक्त छः द्रव्यों में धर्म अधर्म आकाश काल ये चार द्रव्य उदासीन हैं, प्रेरणा नही करते। जीव और पुद्गल द्रव्य जब गति करने, रुकने, अवकाश लेने, अपनी हालतोंको बदलने को होते हैं तब यह चारों द्रव्य सहायक बन जाते हैं। उदाहरण के लिये मछली को लीजिये—वह जल के बिना जीवित नहीं रह सक्ती और न चल सक्ती है। जल उसे खींच

कर नही दौड़ाता किन्तु जब वह चलती है तो जल उदासीन रूप से निमित्त बन जाता है। आप एक वृद्ध पुरुष को देखिये—वह लाठी के सहारे चलता है तो लकडी उसे खींच कर नही चलाती। चलने की योग्यता मनुष्य में है, लकडी उदासीन रूप से सिर्फ सहारे का काम देती है। यही हाल धर्म अधर्म आकाश और काल द्रव्य का भी है जो जीव तथा पुद्गल को चलने रुकने अवकाश लेने और अनेक रूपों को बदलने में उदासीन निमित्त बने रहते हैं। यह छः द्रव्य सम्पूर्ण संसार में भरे हैं, कम नही हैं तथा अधिक नही हैं। अनादि काल से चले आ रहे हैं और अनन्त काल तक बने रहेंगे। इनका रूप हमेशा बनता बिगडता और बदलता रहता है। इन द्रव्यों का नाश नहीं होता यह जीव अनादि काल से ऊपर कहे हुवे पांचों द्रव्यों के बीच फंसा हुवा दुख भोग रहा है।

॥ भजन ॥

(स्वर्गीय यति नैनसुख दासजी कृत)

अजर अमर चित चिन्ह हमारा,
हमें जगत क्या करना है।
अशरण जगमें,
हमारे पास हमारा शरना है ॥ टेक ॥
धर्म अधर्म आकाश काल
पुद्गल से हमें तो निकलना है।
इन पांचों की उरझ से
सुरझ स्वपद आचरना है ॥ अजर० ॥१॥
मैं चेतन ए जड, इनसे
लड भिड के हमें क्यों मरना है।
सम्यक् दर्शन ज्ञान
चरित्र हमें तो धरना है॥ अजर० ॥२॥
सिद्ध समान स्वरूप हमारा
अष्ट करम से डरना है।
सम्यक आदि अष्ट गुण
पाय, जगत से तिरना है॥ अजर ०॥३॥

पाप पुण्य दो बंध शुभाशुभ

हर, शुद्धातम करना है।

सोहं सोहं जाप जपि

इन पापों को हरना है ॥ अजर० ॥४॥

भूत भविष्यत बंधन हरिके

पथ अबंध में परना है।

टुक जीये तौ क्या

सन्मुख तौ सबके मरना है ॥ अजर० ॥५॥

भव-समुद्र से तिर 'नयनानंद'

शिवरमणीको वरना है।

अशरण जग में

हमारे पास हमारा शरना है ॥ ६ ॥

अजर अमर चित चिह्न हमारा

हमें जगत क्या करना है ?

卐

छः द्रव्यों का नाटक

पुद्गल-धर्म-अधर्म-आकाश-और काल इन पांच द्रव्यों ने मिल कर सलाह की कि संसार में एक वडा भारी नाटक खेला जाय जो हमेशा चलता रहे उसका चक्कर कभी न टूटे और हमारे नाटक में किसी प्रकार की कभी वाधा भी न आने पावे किन्तु यह नाटक जीव द्रव्य को शामिल किये विना नही खेला जा सक्ता है। हम पांचों द्रव्य तो अजीव हैं जड हैं हमारे में ज्ञान का अभाव है इसलिये जीव का शामिल करना निहायत जरूरी है। अब विचार होने लगा—जीवको किस प्रकार बुलाया जाय, अन्त में यह फैसला हुवा कि एक पार्टी की जाय और उस पर जीव को खाना खाने के लिये बुलाया जावे। ऐसा सोच विचार कर पार्टी का दिन तै हो गया और जीव को निमंत्रण भी दे दिया गया। इधर सब तय्यारियां होने

लगीं । जीव महाशय निमंत्रण पाकर बहुत खुश हुवे ।

पांचों द्रव्यों ने जीव को खुश करने के लिये और अपने जाल में फंसा कर संसार नाटक में शामिल होने के लिये पहिले से ही सुन्दर २ चीजें तय्यार करली मोह रूपी शराब का प्याला भी तय्यार कर लिया था, तथा खाना खाने के बाद पहरने के लिये आठ कर्मों का एक बहुत सुन्दर हार बना लिया था इसके इलावा जीव के मनोरंजन के लिये पांचों इन्द्रियों के जो जो भोग इकट्ठे कररखे थे उनका तो कहना ही क्या था ? नियत दिन पर ठीक समय पर पार्टी हुई । जीव महाशय पहूंचे । पांचों द्रव्यों ने उठकर उनका बडा आदर सत्कार किया, हाथ मिला कर सुन्दर कुर्सी पर वैठाया और सबसे पहिले मोहरूपी शराब का प्याला पेश किया गया जिसको पीतेही जीव को एसा अजीव नशा

चढा कि अपनी खासियत को भूल नशे में चूर होकर पांचों द्रव्यों की मोहब्बत में फंस गया।

अब जीवको सुन्दर लगने वाले खट्टे मीठे चट पटे लजीज जायकेदार सुन्दर सुन्दर पदार्थों को खानेके बाद पुद्गल की बनी हुई अनेक तरहकी सुन्दर २ मनोहर चीजें उसके सामने आई शरीर को सुख देने वाले मुलायम गद्दे रेशमी कपडे आलिंगन करने के लिये सुन्दर कोमलांगी स्त्रियें, सूंघने के लिये इतर लेवेंडर तेल फूलों के गजरे वगैरह तथा देखनेके लिये अनेक तरह के मनोरंजक सिनेमा और कानों को प्यारे लगनेवाले बाजे सितार वायलिन बांसुरी आदि। जब ये सब चीजें उस के सामने आईं तो उनको देखकर मोह—शराब के नशे में मतवाला हुवा मोही जीव महा खुश हुवा और कहने लगा, आहा! अब तो बडे मौज

की छनेगी खूब ऐशो आराम करूंगा जिन्दगी के दिन बादशाही ठाठसे गुजरेंगे इस प्रकार उसके मगन होते ही सबने मिल कर आठ कर्मों का बना हुवा हार जो पहिले से ही तय्यार था उस को पहना दिया, बस फिर क्या था जीव पागल के समान खुश होकर नाचने लगा कर्मोंका हार पहनते ही दोनों घी खिचडी के समान, दूध और पानी के समान, तिल और तेल के समान एक में एक होगए। जीव पूरी तरह से कर्मों के जाल में फंस गया।

जीव जब पुद्गल रूपी कर्मोंके फन्दे में फंस कर पराधीन होगया तो उसकी आजादी का खातमा होगया, पुद्गल कर्म जिस प्रकार नचाता जीव उसी प्रकार नाचने लगा, वह अपनी सारी सुधि बुधि भूलकर पुद्गल की बनी चीजों का पक्का गुलाम बन गया। कभी अप्सरावों के समान सुन्दर स्त्रियों में

मगन रहता, तो कभी जायके दार खानों को खाता, जव कभी मन्शा होती इतर तैल फुलेल सूंघने में मस्त हो जाता, तथा आंखों को प्यारे लगने वाले सुन्दर चित्रों नाटकों को देखकर वहुत खुश होता, कानोंको प्यारे लगने वाले अनेक राग रागनियों को, स्वरों को वाजों में सुनकर मस्त हो जाता था । जीव मोहरूपी नशेमें पागल हो पांचों द्रव्यों के साथ मिलकर सुन्दर सुन्दर वस्तुओं के लालच में मगन होता हुआ संसार नाटकमें फंस गया, अनेक प्रकार के रूप बनाकर खेल खेलने लगा ।

अब एक दिन एक स्थान पर वैठकर छहों द्रव्यों की मीटिंग हुई कि संसार में ऐसा नाटक खेला जाय जो हमेशा चलता रहे कभी इसका सिलसिला न टूटे और हमारे इस नाटक को देख कर बडे बडे ज्ञानी पंडित भी चकित रह जावें और असली भेद न समझ

सकें। सब हमारे चक्कर में फंसे रहें। अब विचार होने लगा कि सबसे पहिले इस नाटकका नाम रखा जावे। बहुत सोच विचारके बाद चार द्रव्यों ने धर्म अधर्म आकाश और कालने यह तजवीज पेश की कि इस नाटक का नाम "छः द्रव्योंका नाटक" रखा जावे, क्योंकि यही छः द्रव्य इसमें काम कर रहे हैं और इनहीं छः द्रव्यों का यह संसार बना हुआ है। जीव और पुद्गल जो घी खिचडी बने हुये थे बहुत सोच विचार के बाद कहने लगे कि इस संसार नाटक में हमारे छः द्रव्यों का नाम नहीं आना चाहिये क्योंकि इस संसार में अनन्तानंत जीव और पुद्गल भरे हुये हैं, इनका जब नाटक शुरू होगा तब बडे २ गुल खिलेंगे, बडे बडे कुकर्म, अत्याचार, और उपद्रव होंगे, हिंसा होगी। जिनका वर्णन नहीं किया जा सक्ता! उस वक्त हम को संसार के सभी प्राणी हर वक्त उल्हाना

देते रहेंगे वदनाम करते रहेंगे गालियां पडती रहेंगी, जमाना हमको बुरा कहेगा कि इन छः द्रव्योंने मिलकर संसार में कुकर्म फैलाया हुया है। सो हमारी राय यह है कि हमारे नाम की वजाये एक वड हस्ती का नाम रखा जावे तो वहतर है। हमारी रायमें तो "परमात्मा' का नाम ही ठीक रहेगा—उसका नाम रखने से संसार का कोई भी प्राणी चूं नहीं करेगा। सव चुप रहेंगे, हमारे ऊपर कोई उंगली नही कर सकेगा और न हम वदनाम होंगे। वल्कि हम संसार के सव प्राणियों के इलजामों से दोषों से कहावटसे वरी हो जावेंगे कोई भी आंख उठाकर हमारी तरफ नहीं देख सकेगा। और फिर हम परमात्मा की ओट में दुनिया भरमें होने वाले सारे कुकर्म खुले दिल से करते रहेंगे कोई हमको कहने सुनने वाला न होगा। तमाम दोष पर-मात्मा के मत्थे ही मंढाजायेगा। परमात्मा का

ना कि हमारी संसार के प्राणियों की आवाजें
द्रव्य जीव और निकलती रहेंगी कि हे परमात्मा
सके चल फिर ही है, तू ही सब पापों को हरने
हम दोनों । तूही सृष्टिका कर्ता हर्ता है,
चलने में जिसमें जितना भी काम होता है तेरी
मददर्जी से होता है, तेरे वगैर पत्ता तक नही
हिल सका । चार द्रव्योंने जीव और पुद्गल
की जब यह बात सुनी उनको बहुत ही
पसंद आई और सुन कर बहुत खुश हुये
और कहने लगे कि हमारा छः द्रव्यों का नाम
रखने की वजाय परमात्मा का नाम रखना
बहुत ठीक रहेगा । फिर हम सब दोषों से
बरी हो जायेंगे यह कह कर छः द्रव्योंने मिल-
कर इस संसार नाटक का नाम "जगत कर्ता
ईश्वर" रख दिया जो सारे प्राणियों के मुख
से यही आवाजे निकल रही हैं कि सृष्टि का
कर्ता हर्ता ईश्वर हैं । "जगत कर्ता ईश्वर"
नाम रखनेके बाद सबने विचार किया कि

नाटक खेलने के लिये सबसे पहिले जगह का होना जरूरी है, आकाश द्रव्य कहेगा कि इस जगह की चिन्ता मत करो तीन लोक में फैलाया मेरा फैलाव सब जगह है, तुम तीन लोक में हमारे नाटक घर बनावो और अपना खेल तमाशा करो, अब तमाशा दिखलाने का काम कौन कौन द्रव्य करेंगे इस पर विचार हुवा तो जीव और पुद्गल यह दोनों द्रव्य इस काम के लिये तय्यार हो गए, कहने लगे कि हम दोनों द्रव्य अनन्त शक्तिशाली हैं हम संसार के बहुत वडे बहुरूपिया और खिलाडी हैं हमारा खेल अनेक रूपों में फैलेगा हमारी इतनी बडी ताकत है कि तीनों लोकों में हमारी सत्ता फैल जायगी । तीन द्रव्योंने अपना अपना काम संभाल लिया, आकाश ने जगह दी, जीव और पुद्गल द्रव्य एक्टर बने अब वाकी द्रव्यों से पूछा गया तुम क्या काम करोगे ? तब धर्म और अधर्म द्रव्यों ने

ना कि हमारी मदद के बिना तुम दोनों द्रव्य जीव और पुद्गल हलन चलन नहीं कर सके चल फिर और रुक नही सक्ते इस लिये हम दोनों द्रव्य तुम्हारे दौडने में हिलने व चलने में रुकने में और खडे होने में पूरी पूरी मदद करेंगे तुम तीनों लोकों में खूब चक्कर लगावो दौडो जहां इच्छा हो वहां ठहरो, तुम्हें कोई बाधा नही पडेगी। छठे काल द्रव्यसे पूछने पर उसने कहा—तुम्हारी हालतों को बदलने में छोटे से बडा होने में तथा एक रूप को छोड कर दूसरा रूप धारण करने में जो समय लगता है उसमें मैं तुम सबकी मदद करूंगा। इस प्रकार छःहों द्रव्यों ने अपना अपना काम संभाल लिया, और यह निश्चय किया कि संसार के नाटक में कभी रुकावट या गडबड पैदा न होने पावे। यह सोच विचार कर ग्यारह उपमंत्रियों को बुला कर

उन से अपनी मदद करने के लिये कहा कि, तुम सब हमारे काम में सहायता करो जिससे यह संसार रूपी नाटक खूब फले फूले और हमारा राज्य दिन दूना और रात चौगुना खूब तरक्की करता रहे। राग, द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ, हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील परिग्रह, इस प्रकार इन ११ मंत्रियों को सारी हकूमत सोंपदी गई जिससे प्रजा इन के वस में रहे। यह सब मन्त्री हकूमत मिलने पर बहुत खुश हुवे और आपस में विचार करने लगे कि ऐसी होश्यारी से काम करना चाहिये जिससे सारी प्रजा भी खुश रहे और हमारी हकूमत भी कभी खत्म न होने पावे। हम सब लोग प्रजा के अन्दर प्रवेश कर जायें उनके मन के मुताविक जैसा वह कहें वैसा उनका काम करते रहें। इसप्रकार सब लोग हमारे वशमें हो जायेंगे और हमारी कदर होने लगेगी, तथा यह संसार नाटक भी हमेशा इसी प्रकार

भूल भुलैया की तरह चलता रहेगा । ऐसा सोच कर ११ उपमंत्री सब जीवों की काया में प्रवेश कर गए, उनके मन और बुद्धि पर अपना कब्जा करलिया । अब क्या था इन शैतानों के कब्जा करते ही संसारी जीव भी जी भर कर राग द्वेष तथा कषायों और पापों की होली खेलने लगे ।

शारीरिक सुख और इन्द्रियों को अच्छा लगने वाले पदार्थों के मिलने पर सुखी और न मिलने पर दुखी होने लगे अब छः द्रव्योंने ११ मंत्रियोंकी मदद से संसार नाटक शुरू करने के वाद विचार किया कहीं ऐसा न हो कि लोग हमारे भेद को जान जायें, हमको पहिचान लें, इस लिये अब अपनी रक्षाका और छिपने का उपाय भी कर लेना चाहिये सबने मिल जुल कर सोचा कि एक ऐसा वातावरण पैदा किया जाय जिससे कोई भी इस वात को न जान सके कि संसारकी

रचना करनेवाले यह छः द्रव्य ही हैं। ऐसा विचार करते ही मोहके नशे में मस्त हुये जीवों के दिमाग में एक ऐसी विचार धारा बहाई गई, जिसकी वजह से सब यही समझने लगे, कि इस संसारका बनाने वाला कोई एक परमात्मा है। मोही जीव अपनी शुद्धात्म अवस्था को भूलकर किसी एक पृथक परमात्माकी कल्पना करने लगे। उन्हें यह विश्वास होगया कि जो कुछ अच्छा या बुरा करता है सब परमात्मा करता है जीव तो परवश है वह कुछ नही कर सक्ता उस परम पिता परमात्माकी मर्जी के खिलाफ एक पत्ता भी नही हिल सक्ता इस प्रकार का विश्वास पैदा कराने के बाद जब जीवों को मोहित करके उन की निजात्म चैतन्य परमात्मपने की शक्ति को भुला दिया गया तब जाकर सब द्रव्यों को शान्ति मिली और पूरा यकीन होगया कि अब हमारी ओर कोई भी

उंगली उठाकर नहीं देखेंगे, पूरे इत्मीनान के साथ अपने को छिपाये रखकर इस संसार का नाटक हम खेलते रहेंगे और संसार के सब जीव भी परमात्मा के खौफ से उस परम पिता परमात्माकी ऐसी ही मर्जी है एसा मान अपनी सुध बुध भूल इस संसार सागर में मगन रहेंगे कभी अलग होनेकी कोशिश तथा हिम्मत भी नहीं करेंगे । इधर परमात्मा संसार के जाल से अपना पिन्ड छुडा कर मोक्ष नगरी में बैठा हुआ शांति से इन सब द्रव्योंकी करतूतों और जालसाजियों को देख रहा था। उसने विचार किया यह तो बडा अंधेर हो रहा है। सब द्रव्यों ने ११ शहतानों को अपना उपमंत्री बना कर सम्पूर्ण संसारी जीवोंको मोहरूपी शराब पिला रखी है । वे अपने को भूले हुवे हैं, आत्मा के असली पुरुषार्थ को खत्म कर चुके हैं और मुझे संसार का कर्ता हर्ता मानने लगे हैं। इस प्रकार मैं

वेकार में ही वदनाम हो रहा हूं । मैं वडी मुशकिल से तो इनके चक्कर से निकल पाया हूं इन्होंने मुझे भी मोह की शराव पिलाकर पागल वना रखा था । मैं इनके चक्कर में आकर अपनी आत्मशक्ति को खो कर अपने को भूल चुका था इनके जाल में फंसा हुवा अपनी दुर्गति करा रहा था । मेरे सौभाग्य से मुझे सच्चे गुरु मिले, उनके उपदेशों से मुझे अपने अनन्त वैभव का पता चला, मैं मोह नींद से जगा, मेरा नशा उतर गया तव मैंने अपने आत्मपुरुषार्थ को संभाला सांसारिक विषय भोगों का इन्द्रियों और मन को लुभाने वाले पदार्थों का त्याग किया । विषय कषायों को छोड संयम और तप के द्वारा अपना सुधार किया । मेरी आत्म चैतन्य शक्ति जो विषयों में फंसने से मूर्छित हो चुकी थी, जगी, आत्मध्यान की अग्नि को प्रज्वलित कर समाधि के द्वारा मैंने सव कर्मों

को नष्ट कर डाला, अब अपने परम शुद्ध निजात्म स्वरूप में बैठा हुवा निराकुल आनंद में मगन हूँ। मुझे सांसारिक झंझटों से क्या मतलब? तीनों लोकों में जो तमाशा हो रहा है उस सबको मैं देख रहा हूं जान रहा हूं और अब संसार से मेरा कोई मतलब ही नहीं है, फिर भला यह सब द्रव्य मेरा नाम ले लेकर, कि यह संसार परमात्मा का रचाया हुवा है, मुझे झूठ मूठ क्यों बदनाम कर रहें हैं, जरा चलकर उनसे पूछना चाहिये।

ऐसा विचार कर परमात्म देव संसार में आए और द्रव्यों से पूछने लगे, कि भाई तुम ही सब तो ग्यारह शैतानों की मदद से इस सम्पूर्ण संसार में फैलकर हकूमत करवा रहे हो, संसार के स्वरूप को बनाते और बिगाडते रहते हो, अनेक तरह के खेल कर संसार नाटक को चला रहे हो, अच्छे बुरे संसार के जितने काम हैं, ये सब तुम्हारे

मंत्री करा रहे हैं, जिनके द्वारा स्वर्ग नरक ऊंच नीच, राजा गरीव, सुख दुख का निर्माण हो रहा है, मैं तो इन सब झगडों से निकल कर अपनी मुक्ति नगरी में चला गया, अब मुझे संसार से क्या वास्ता, जो तुम लोग मुझे वदनाम कर रहे हो। सवको ऐसे भुलावे में फंसा दिया है, कि सब जीव यही समझने लगे हैं कि इस संसार को बनाने, चलाने और विगाडने वाला परमात्मा है, विना परमात्मा की मर्जी के कोई काम नही हो सक्ता, लोग अपने कर्मों की तरफ तो देखते नही, नाहक मुझे दोष लगा रहे हैं, भला! ऐसी गलत फहमी तुमने क्यों फैला रखी है।

सब द्रव्य परमात्मा की इस बात को सुन कर कहने लगे, हे नाथ! आप तीन लोक के स्वामी हो, आप सब कुछ जानते देखते हो, आप अनन्त ज्ञानी हो, आप से कोई बात छिपी नही है, पांचों पाप चारों कषाय, और

राग तथा द्वेष इन ग्यारह मंत्रियों की मदद से हमने अपना जाल फैला रखा है। जितने अच्छे और बुरे कर्म संसार में हो रहे हैं वे सब संसारी जीवों के द्वारा ही हो रहे हैं। कभी अच्छे विचारों से दान दया सेवा परोपकार पूजा पाठ व्रत उपवास आदि उत्तम कर्मों से पुण्य को उपार्जन कर जीव अपने संसार को अच्छा बना लेता है, शारीरिक सुखों को भोगने लगता है और कभी खोटे भावों से अपने स्वार्थी विचारों से खोटे कर्मों को करता हुवा पाप का बंध कर लेता है जिसके द्वारा सांसारिक दुखों को भोगता है खोटी गतियों में जाकर उसे शारीरिक वेदनायें उठानी पडती हैं। इस प्रकार संसार में कर्म रूपी जाल में फंसा हुवा जीव रात दिन सुख दुख भोग रहा है। यह संसार हमारा रचाया हुवा नाटक घर है। हम सब द्रव्य ही इस संसार को बनाये हुये चला रहे हैं। हम

अच्छी तरह जानते हैं कि इस संसार से अब आपका कोई मतलब नही रहा लेकिन आप हम सबको धोका देकर अपना मतलब गांठ हमारे सबके जाल से छूट गये, हमारे इस कैद खाने को तोडकर अपनी मोक्ष नगरी में भाग गए हैं इस वजह से हमने आपका नाम 'जगत कर्ता ईश्वर' रख दिया है। आप तो समझदार हैं जानते हैं जैसे चार आदमी चोरी करें और उन में से एक आदमी भाग जावे और हाथ न आवे तो फिर चोरी का सारा इलजाम उस भागने वाले पर ही मढा जाता है। फिर भला ! संसार का तो यह कायदा ही है कि लोग गलती तो खुद करते हैं और कसूर दूसरोंके सिर पर मढते हैं अपने ऊपर आंच तक नही आने देते संसार में सब का यही हाल हो रहा है, अपनी गलती कोई नही मंजूर करना चाहता। हर एक आदमी अपनी बचत करना चाहता है। महाराज !

इसीलिये हमने अपना बचाव करने के वास्ते आपको बीच में डाल कर आपका नाम मशहूर कर दिया है जिससे हम पहचाने न जा सकें, सब लोग आपका नाम लेते रहें। और हम उसकी आड में छिपे रहकर निडर हो अपना नाटक खेलते रहें। दुनिया तो ठगों का घर है फिर भला हमने अपने बचाव के लिये ऐसा किया तो क्या कसूर किया ?

आप यह तो बतलायें कि सब कुछ जानते हुये भी हमारी ठगों की नगरी में और इस मायाविनी दुनिया में आप वापिस फिर क्यों आए हैं ? हे प्रभो यहां तो झूठ का, चोरी का, ठगी का और पर स्त्री गमनका, हिंसा तथा कतल का, दूसरे का धन हरन करने का बाजार गरम है। अब आपको फिर संसार की मैल चिमट गई तो फिर आपको अपना पिंड छुडाना मुशकिल हो जायगा और दोबारा हमारे चक्करमें फंस जावोगे। हे

स्वामिन् ! आप तो अब अलग रह कर ही तमाशा देखते रहो । हम लोग जो भी कुछ अच्छा या बुरा कर रहें हैं, करने दो, उसमें दखल मत दो, वरना आपकी शामत आजायगी ।

परमात्मा इतना सुनते ही चुपचाप शान्ति से अपने मोक्ष नगर को वापिस चला गया उसने इन शैतानों से बात करके उलझना ठीक नहीं समझा । वह वहां जाकर विचार करने लगा कि देखो तो मोह और अज्ञानता का कैसा विचित्र जाल फैला हुवा है कि, यह संसारी जीव अनादि काल से चले आ रहे, इस ससाररूपी नाटक में खुद ही अपनी करणी से फंस रहे हैं, इसमें आनन्द मान कर मगन हो रहे हैं, मन और इन्द्रियों के गुलाम बन रहें हैं, भोगों को भोगने में, धन इकट्ठा करने में अनेक तरह की जालसाजी कर रहे हैं । अपने किये हुवे कर्मों के मुताबिक

जन्मते और मरते हुये इधर उधर घूम रहे हैं किन्तु सारा दोष मेरे सिर पर लाद देते हैं, कि जो भी कुछ अच्छा या बुरा होता है परमात्मा की मर्जी से होता है, भला मुझे क्या जरूरत पडी कि मैं अपनी शान्ति में बाधा डालूं, संसार के कामों की उलझन में पड कर आकुलता पैदा करूं किसी को बनाऊं और फिर उसी को बिगाडूं, किसो से पहिले तो खोटा काम कराऊं और फिर उसी को दण्ड दूं। ये मूर्ख प्राणी अपनी आंखे बंद किये पडे सो रहे हैं इन सबको अपनी भूल का पता ही नहीं है, सब इसी प्रकार मोह रूपी नींद में सोते रहेंगे किसी को सौभाग्य से सच्चे गुरुओंका उपदेश मिल जायगा, तो उसीका बेडा पार होगा, इस संसाररूपी गोरख धन्धे से वही छूट सकेगा, वरना संसार नाटक तो बडा विचित्र हो रहा है, भट्टी के अंगारों की तरह लोग इसके भीतर फंसे दुखों की

वेदनाओं से जल रहे हैं, दुखी हो रहे हैं और फिर भी इसको छोडना नही चाहते हैं।

भजन

(स्वर्गीय बाबू न्यामतसिंह जी कृत)

अजब दुनिया की हालत है,
अजब यह माजरा देखा।
जिसे देखा उसे वहमो,
गुमां में मुबतला देखा।
प्रकृति जीव में अनमेल
सा झगडा पडा देखा।
अनादि काल से लेकिन,
है दोनों को मिला देखा।
इन्ही दोनो का हमने बस,
नजारा जाबजा देखा।
कहीं इंसा कहीं हैवां
कहीं शाहो गदा देखा।
यही है आत्मा जिस को,

अरब में रूह कहते हैं ।
ज्ञानमय सत् चिदानन्द,
रूप लाखों नाम लेते हैं ।
कहीं माद्दा कहीं माया,
कहीं मेटर कहीं पुद्गल ।
यह सारे नाम हैं उसके,
जिसे हम प्रकृति कहते हैं ।
बशक्ले दूध पानी गो
मिले आपस में रहते हैं ।
मगर दर असल यह दोनों,
जुदा हर इक से रहते हैं ।
कर्म कहते हैं जिसको यह,
वही बदकार माया है ।
इसी ने सारी दुनिया में,
अजब अन्धेर छाया है ।
यही तो आत्मा को भरम के,
चक्कर में लाया है ।

हरिहर नर सुरासुर सब

को, फंदे में फंसाया है।

निराला ढंग कर्मों का,

अजब नक्शा दिखाया है।

सदा स्वर्गों में भी हरगिज,

नही इस जीव को कल है।

नरक में हर तरफ हर दम,

मची दिन रात कल कल है।

मानुष गति में भी देखो,

जीव को चैन नही एक पल है।

मौत का बज रहा डंका,

दमादम और चलाचल है।

कहां जाय कहो 'न्यामत'

बडी दुनिया में मुश्किल है।

सभी संसार व्याकुल है,

न यहां कल है न वहां कल है॥

जगत कर्ता ईश्वर नहीं है।

[यह संसार अनादि अनन्त है]

इतना सब लिखने के बाद यह सिद्ध हो चुका है, कि यह छः द्रव्य ही संसार को बनाये हुवे हैं, संसार रूपी वृक्ष की जड यही हैं, इनके मेलसे संसार की रचना हुई है यह द्रव्य कुदरती हैं अनादि काल से चले आ रहे हैं, किसी के बनाये हुये नही हैं और इसी प्रकार हमेशां तक कायम रहेंगे, इनका कभी नाश नही होगा। लोगों में कहावत है, कि संसार कुदरत का खेल है तो यहां कुदरत से मतलब इन द्रव्यों से ही है, ईश्वर से नही। ईश्वर अर्थात् परमात्मा तो वह शुद्ध अवस्था है, जहां किसी प्रकार की इच्छा नहीं है जब तक इच्छावों का नाश नही हो जाता तब तक परमातम अवस्था नही प्रगट होती, इच्छायें संसारी जीवोंमें हुवा करती हैं, ईश्वर में नही, जब किसी प्रकार की इच्छा ही नही

है, तब फिर वह संसार की रचना क्यों कर करेगा, क्यों कि बिना इच्छा के कोई क्रिया नही होती है अतः यह निश्चय है कि संसार अनादि और अनन्त है ।

छः द्रव्यों का स्वरूप पहिले कह आये हैं, आकाश का काम स्थान देने का है, धर्म और अधर्म नामक दोनों द्रव्य दौडने में हलन चलन करने में तथा एक स्थान पर खडे रहने में मदद कर रहे हैं, काल द्रव्य अनेक अवस्थाओं को बदलने में मदद कर रहा है जीव और पुद्गल यह दोनों द्रव्य संसार रूपी नाटक खेल रहे हैं, स्वर्ग की नरक की रचना, जीवों के चौरासी लाख शरीरों की रचना, सूर्य, चंद्र, तारा, ग्रह, नक्षत्र, बडे २ पहाड समुद्र नदियां तालाब पेड़ पौधे, मनुष्य पशु और पक्षी ये सब जीव और अजीव द्रव्यों के मेल से बने हुये हैं। आयु का निर्माण करने वाला काल है, एक नियत

समय तक अपनी आयु के मुताबिक जीव किसी एक शरीर में कैद रहता है तथा आयु के समाप्त हो जाने पर जिसको संसार मौत कहता है उस शरीर को छोड कर दूसरे शरीर में अपने अच्छे और बुरे कर्मों के मुताविक जन्म लेकर संसार के खेल में फिर मगन हो जाता है। इस प्रकार अनादि काल से यह संसार अनेक रूपों में बनता बदलता और विगडता चला आ रहा है, नये रूपों की उत्पत्ति और पुरानों का नाश हो जाता है, किन्तु छः द्रव्य ज्यों के त्यों बने रहते हैं, और इसी प्रकार हमेशां कायम रहेंगे।

आप दो मिट्टी के पुतलों को लीजिये एक पर तेल का लेप कर दीजिये, और दूसरे को कोरा रहने दीजिये आप देखेंगे चिकने पुतले पर धूल के कण आते हैं और चिपक जाते हैं उसके असली रंग रूप को ढक कर मैला कर देते हैं। किन्तु रूखा पुतला वैसा

ही रहता है। धूल के कण उसके पास भी आते हैं किन्तु चिकनाई न होने से चिपकते नहीं हैं, नीचे गिर जाते हैं। वह पुतला ज्यों का त्यों कोरा बना रहता है। अथवा दो लोहेके गोलों को लीजिये। एक गोला आग के भीतर डाल कर खूब लाल अंगार कर लीजिये, और दूसरे को वैसा ठंडा ही रहने दीजिये, अब इन दोनों गोलों को पानी के भीतर डाल दीजिये, आप देखेंगे ठंडा गोला जैसा बाहर था, उसी प्रकार शान्त अवस्था में पानी के भीतर भी पडा है, किन्तु गरम गोला पानी में जाकर एक तौफान पैदा कर देता है और पानी को अपने भीतर खींच कर सोखने लगता है, जिसकी वजह से उसमें जंग लग जाती है और वह मैला हो जाता है।

ठीक यही हाल संसारी जीवों का है, इष्ट वस्तु का वियोग और अनिष्ट वस्तु का

संयोग होने पर अर्थात् जो हम चाहते हैं वह हमें नहीं मिलता किन्तु जो हम नहीं चाहते हैं, वह बार बार मिलता रहता है ऐसी हालत में हमारे भीतर राग द्वेष पैदा होता है, शत्रुता और मित्रता के भाव बनते हैं फिर उसके साथ ही साथ क्रोध-मान-माया और लोभ के विचार आते हैं और हम हिंसा-झूठ चोरी–कुशीलसेवन–परिग्रह का संग्रह इन चारों कषायों और पांचों पापों में फंस जाते हैं इनके द्वारा हम संसार में सुखी होना चाहते हैं, ऐसी हालत में हमारी आत्मा भोगों की वासना क्रोधादि कषाय तथा राग द्वेष की गर्मी से इतनी अधिक गरम हो जाती है कि [गरम लोहे के समान जो पानी में पडा हुवा पानी को खींचता है उसी प्रकार] आकाश मण्डल में भरा हुवा हमारे चारों तरफ एक समुद्र के समान जो पुद्गल पर-माणुवों का समुदाय है, जो परमाणु इतने

सूक्ष्म हैं कि दिखलाई नहीं देते, उन परमाणुओं को हमारी आत्मा खींचने लगती है। जिस प्रकार तेल के द्वारा चिकना पुतला धूल कणों के चिपकने से मैला होगया, उसके शुद्ध असली रूप को धूल कणों ने चिपककर ढक दिया, उसी प्रकार राग द्वेष की चिकनाई से पुद्गल कर्म वर्गणावों के परमाणु इस जीव आत्मा की ओर खिंचकर इसमें प्रवेश कर [जिस प्रकार पानी में रंग मिलजाने से उसके शुद्ध स्वरूप को रंगीन कर देता है] इसके शुद्ध ज्ञान दर्शन गुणोंको मलीन बना देते हैं। आप रंगीन शीसे का चश्मा लगा लीजिये तो आपको सारा संसार रंगीन नजर आने लगेगा। ठीक उसी प्रकार कर्मों की मैल से इस जीव का ज्ञान दर्शन अर्थात् जानने देखने की शक्ति, वस्तु को गलत रूप से जानने और देखने लगती है।

पुद्गल परमाणु अनन्त आकाश में

ठसाठस भरे हुये हैं, रेडियो की तरंगों के समान जो आकाश मण्डल में फैले हैं किंतु दिखाई नही देती उसी प्रकार पुद्गल परमाणु भी दिखलाई नही देते हैं उन परमाणुवों को जीवात्मा दिन रात कषायों की गर्मी से अपनी ओर खींचता रहता है। जब वह पुद्गल आत्मा में एकत्रित होकर दूध और पानी के समान मिल जाते हैं, तब उनको कर्म कहा जाता है। यह कर्म मूल रूप में दो विभागों में बटे हुये हैं, एक शुभ पुण्य कर्म, दूसरा अशुभ पाप कर्म । उत्तम विचारों से दया दान परो-पकार, शान्ति, क्षमा, संतोष धैर्य आदि शुभ भावों से, खिंची हुई जो पुद्गल वर्गणायें जो कर्म रूप बनती हैं उनको पुण्य कर्म कहा जाता है जिस के फल से जीव को सांसारिक सुख सौभाग्य ऐश्वर्य विद्या आदि की प्राप्ति होती है। वह अपने को सांसारिक जीवन में सुखी पाता है, राजा महाराजाओं के यहां

जन्म लेता है, तथा स्वर्ग की विभूतियां को प्राप्त कर देवता भी बन जाता है, यह सब शुभ कर्मों से उत्तम विचारों और धर्म कार्यों के फल से होता है। अशुभ खोटे विचारों से पाप कर्म से गंदी क्रियाओं से क्लेशित परिणामों से, हिंसा झूठ चोरी कुशील परस्त्री गमन मांस मदिरा का सेवन, दूसरों को दुख देने शिकार खेलने वेश्या गमन आदि खोटे कामों के करने से जो कर्मों का समूह बनता है, वह पाप रूप होकर संसार में दुःख दरिद्रता रोग शोक सन्ताप आदि दुःखों को देता हुआ पशु जीवन में तथा नरकों में ले जा कर इस जीव को पटक देता है जहां वह सिर्फ दुःख ही दुःख प्राप्त करता रहता है।

इस प्रकार यह संसारी जीव अनादि कालसे चले आए पाप और पुण्य रूपी कर्मों की जंजीरों में बंधा चारों ओर चौरासी लाख शरीरों में घूमा करता है। सुख और दुखको

भोगा करता है, पुराने कर्मोंको भोग कर उन्हें नाश कर देता है, तथा कषायों और रागद्वेष की गर्मी से नये कर्मों का बन्ध करता रहता है। जिस प्रकार आम के पेड पर बौर लगा पानी मिट्टी के मिलने से धीरे धीरे बडा हुवा अम्बिया बना और फिर पक कर आम के रूप में झड गया, फिर पानी और खाद मिलने से अगले साल फिर नया बौर आता है, आम बनता है, गिरता है, इस प्रकार पुरानेका गिरना और पानी खाद मिलने से नये का आना यह सिल सिला हमेशा चालू रहता है बस यही हाल जीव का तथा पुद्-गल कर्मोंका है, पुराने कर्म परमाणु इकट्ठा होते होते बढते जाते हैं और अपना अच्छा या बुरा फल देकर नष्ट होजाते हैं, और फिर राग द्वेष तथा कषायों की गर्मी से नये कर्म आते रहते हैं। यह क्रम जीव और कर्मोंका अनादि काल से चला आ रहा है, और

हमेशां इसी तरह चलता रहेगा, जब तक इसे विवेक की प्राप्ति नही होजाती तब तक जीव के अनन्त संसार का नाश नहीं हो सक्ता है।

कभी उन कर्म वर्गणावों को खींच कर जीव इतना अधिक इकट्ठा कर लेता है जिस की वजह से उसकी जानने और देखने की शक्ति बहुत मन्द हो जाती है, तब वह पेड आदि एक इन्द्रिय जीवों में आकर जन्म लेता है, जो न तो देख ही सकते हैं न सूंघ सकते हैं, सुनना तो दूर रहा जिनके बोलने की योग्यता भी नहीं है, कभी कर्मोंका मैल कम होता है तो दो तीन चार और पांच इन्द्रिय जीवों में जन्म लेता है, जिनके द्वारा स्वाद लेना, सूंघना, देखना और सुनना इन सब की योग्यता प्राप्त होजाती है। पुद्गल कर्म परमाणुवोंका अधिक आकर इकट्ठा होना अथवा कम इकट्ठा होना जीवके कषायों

की तीव्रता अथवा मंदता पर निर्भर है, लोहे का गोला जितना अधिक गरम होगा तो पानी भी उतनी अधिक तेजी से और ज्यादा खींचेगा अथवा मनुष्य की पाचन शक्ति यानी जठराग्नि जितनी अधिक तेज होगी रक्त उतना ही ज्यादा बनेगा, ठीक यही हाल जीव और पुद्गल का है। जिस वक्त जितना अधिक अशान्त और क्रोधादि कषायों के द्वारा भाव अधिक क्लेशित होगा, कर्म उतने ही अधिक तीव्रता से आयेंगे और जिस वक्त परिणामों में मन्दता होती है शान्ति होती है तो कर्मोंका आना भी मन्दरूप से होता है।

किन्तु एक दम शान्त निराकुल वीतराग अवस्था में रहनेसे अपनी आत्म समाधि में बैठनेसे, मोह राग द्वेष आदि कषायले भावों का अभाव हो जाने से जीवात्मा ठण्डे गोले के समान जिस वक्त संकल्प विकल्पों से रहित

होजाता है तो जिस प्रकार चारों ओर पानी के भरे रहने पर भी ठण्डा गोला पानीको अपने भीतर नहो सोखता, उसी प्रकार शान्त स्वरूप निर्विकल्प आत्मसमाधि में लीन जीवात्माओं के अन्दर से कर्म परमाणुओं का प्रवेश नहो होने पाता, वह वाहर ही वाहर घूमते रहते हैं, उनकी शुद्ध शान्त निर्मल अवस्था को गंदा नहीं कर सकते हैं। इस के अतिरिक्त जो पहिले के कर्म परमाणु इस जीवने वांध रखे थे वह धीरे २ झरने लगते हैं। इस प्रकार जीवकी निर्मल अवस्था प्रगट होकर वह परमात्म अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार इस संसार की रचना इन छः द्रव्यों के द्वारा ही हुई है। जिसमें धर्म-अधर्म-आकाश और काल ये चार द्रव्य तो सहायक हैं, और जीव तथा पुद्गल यह दो द्रव्य आपसमें मिले रहते हैं और वदलते

बिगडते रहकर नया नया रूप बदलते रहते हैं, यह दोनो अनन्त शक्ति शाली हैं, अनादि कालसे चले आरहे हैं और अनन्त काल तक जबतक जीव को मोक्ष प्राप्त न होगी इसी प्रकार चलते रहेंगे, और संसार रूपी नाटक घर में खेल खेलते रहेंगे। अब आपकी समझमें आगया होगा कि यह संसार किसका बनाया हुवा है। परमात्मा ने बनाया है या छः द्रव्यों के द्वारा रचा हुवा है। यदि परमात्माने बनाया तो फिर उस परमात्मा को किसने बनाया और उस को भी बनाने वाला कहांसे आया, उसके पहिले क्या था, इस प्रकार विचार करनेसे हर हालत में संसार की अनादि और अनन्त अवस्थाको मानना पडेगा। अब भी यदि आप परमात्मा के जिम्मे दोष लगावो तो आपकी मरजी। जैसे किसी बालकको कह दिया जाता है, कि अमुक कमरे में भूत बैठा है फिर उस अबोध

बालक के दिलसे भूत की बात दूर ही नहीं होपाती। वह भूत ही भूत की रट लगाता रहता है। इसी प्रकार संसार के प्राणियों के दिलमें परमात्मा की ही रट समाई हुवी है, कि इस संसार का रचानेवाला परमात्मा ही है, वही संसारका कर्ता हर्ता है और यह सारी माया परमात्मा की ही फैलाई हुई है। हम इस गलत मान्यता का त्याग करें और परमात्मा के शुद्ध निर्विकारी स्वरूपको पहिचानें। जहां वासनायें इच्छायें नष्ट हो चुकी हैं वही परमात्म अवस्था है। संसार में काम करने वाले छः द्रव्योंके स्वरूप का गहराई से मनन करें तो हमें अपनी गलत मान्यता का बोध अवश्य होगा। जब हमारे मोहका नाश होकर विवेक ज्ञान रूपी नेत्र खुलते हैं तब हम देखते हैं कि वह परमात्मा स्वरूप हमारी ही निर्मल आत्मा का है, जो अभी कर्मोंकी मैल से ढकी हुई है। परमात्मा कहीं

बाहर नहीं है वह हमारे भीतर ही है और हम ही हैं, किन्तु मोह ममता रूपी शराबके नशे में गाफिल होनेकी वजहसे हम अपने शुद्ध परमात्म स्वरूप को भूले हैं। अपनी अशुद्ध विकारी अवस्था को ही सही मान कर किसी एक दूसरे ईश्वर की कल्पना करने लगे हैं। हम सत संग करें, शास्त्रोंका स्वाध्याय करे, तो हमें अपने असली स्वरूपका पता चलेगा।

अब मैं आप का दृढ विश्वास जमाने के लिये आपके सामने संसारके अनादि होनेके बारे में वीर्य तथा बीज से पैदा होने वाले तीन सबूत और पेश करता हूँ उन पर आप गौर करें और विचार करें (१) स्त्री पुरुष [२] पशु पक्षी [३] बीज से पैदा होने वाले वृक्ष। संसा-रमें अनन्तानन्त जीव एक इंद्री से लगा पांच इन्द्री तक वे सब अपने अपने कर्मोंके अनुसार उत्पन्न होते रहते हैं। इन जीवोंकी उत्पत्ति

वीर्य तथा वीज से भी होती है और दूसरे कारणों से भी होती रहती है । मगर स्त्री पुरुप और पशु पक्षियों की उत्पत्ति उनके अपने अपने वीर्य से होती है दूसरे कारणों से नहीं और वीजसे पैदा होनेवाले वृक्षों की उत्पत्ति उनके अपने अपने वीज से ही होती है दूसरे कारणों से नही होती जैसे गेहूँ चना, वाजरा इत्यादि।

अव पहिले स्त्री पुरुप को लीजिये, यह दोनों पुरुप के वीर्य और स्त्री के रज और उसी के गर्भ से अनादि कालसे पीढी दर पीढी पैदा होते चले आरहे हैं और इसी प्रकार अनन्त काल तक पीढी दर पीढी पैदा होते रहेंगे, कभी इनका खातमा न होगा। किसी वडे से वडी हस्ती या साइंसदान की शक्ति नही है जो दूसरे कारणों से स्त्री और पुरुष को पैदा कर दिखाये । स्त्री पुरुष जब भी पैदा होंगे मनुष्य के वीर्य, स्त्री के रजसे

और उसी के गर्भ से पैदा होंगे दूसरे कारणों से न आज तक कभी पैदा हुये और न कभी भविष्य में पैदा हो सक्ते हैं। जो मनुष्य आप को यह विश्वास दिलाते हैं, कि फलां आदमी कानसे और फलां मनुष्य सूंडी से पैदा हुवे, वे सब आपको झूठा विश्वास दिलाते हैं, बल्कि धोका देते हैं। बाज मनुष्यों का तो यहां तक कहना है, कि मनुष्यका वीर्य समुद्रमें गिरा, मछली निगल गई उसके गर्भ रह गया, गंधमत्स्या नामकी लडकी पैदा हुई। आप समझदार और बुद्धिमान हैं, विचार करें ऐसी २ बातें कहां तक सम्भव हो सक्ती हैं। मेरे ख्यालमें ऐसी बातें धर्म विषय में भर्म को ही पैदा करती हैं। यह गलत-फहमियां किसने फैलाईं, उसी अशुद्ध आत्माने जो ईश्वर का रूप छिपाये हुये, शरीर धारण किये हुये, गले में कर्मों का हार पहने हुये कौतुकी बना बैठा है।

अब दूसरा सबूत पशु पत्ती का है जिस प्रकार स्त्री पुरुष की उत्पत्ति पुरुष के वीर्य और स्त्री के रज तथा उसके गर्भ से होती चली आरही है, ठीक उसी प्रकार इन पशु पत्तियों की भी उत्पत्ति उनके अपनें अपने वीर्य व मादायों के गर्भ से ही होती चली आरही है। हां ! पत्तियों की मादायें गर्भ से पहिले अंडा देतीं हैं और अंडों को सेकर बच्चे पैदा करती हैं। इन का भी सिलसिला स्त्री पुरुष की तरह पीढीं दर पीढी अनादि कालसे चला आरहा है। और इसी प्रकार अनन्त काल तक चलता रहेगा।

तीसरा सबूत बीजसे वृत्त पैदा होनेका है। आप गेहूं, चना, और बाजरा को लीजिये। गेहूंके बोने से गेहूं का वृत्त पैदा होता है और फिर गेहूं के वृत्त से गेहूं निकलता है, इसी तरह चना और बाजरा के बोने से चना और बाजरा का वृत्त पैदा

होता है और फिर उनके अपने अपने वृक्षोंसे चना और बाजरा निकलता है। इससे साबित हुवा कि स्त्री पुरुष की तरह यह सिल सिला भी पीढी दर पीढी अनादिकाल से चला आरहा है और ठीक इसी प्रकार हमेशा चलता रहेगा। इनका कोई आदिकाल या शुरू नही है। इन तीन सबूतों से साबित हो चुका कि स्त्री पुरुष, पशु पक्षी, और बीज से पैदा होने वाले वृक्ष अपने अपने वीर्य और बीजों से अनादि काल से पीढी दर पीढी पैदा होते चले आरहे हैं। और इसी प्रकार अनन्त काल तक पैदा होते चले जांयेंगे। स्त्री से पुरुष और पुरुष से स्त्री मुरगी से अंडा और अंडा से मुरगी, गेहूं से वृक्ष और वृक्ष से गेहूं इत्यादि। इसप्रकार एक दूसरे से बनते हुये या पैदा होते हुये अनादिकालसे चले आरहे हैं। परमात्मा का इनके कामोंमें कोई दखल नही है इसलिये

यह संसार अनादि कालसे चला आरहा है और अनन्त काल तक इसी प्रकार चलता रहेगा। किसी बडे से बडी हस्ती की या साइंसदां की ताकत नहीं है कि अपने साइंसके द्वारा पुरुष के वीर्य को या गेहूँ चना और बाजरा के बीज को पैदा कर दिखाये और फिर उनको बोकर स्त्री पुरुष, गेहूं, चना, और बाजरा पैदा कर सकें। किसी की भी ताकत नही है कि प्रकृति के खिलाफ कोई बात पैदा कर दिखाये। किसी की भी ताकत नही है कि चेतन को जड बना दे या जडको चेतन बना दिखाये। किसीकी भी ताकत नही है, कि जिस इंसान के अंदर से रूह निकल चुकी है फिर उसको जिन्दा कर दिखाये। अमेरिका, जरमनी और रूस में बडे बडे साइंसदां और डाक्टर मौजूद हैं, किसी की भी ताकत नही है कि रूह निकल जानेके बाद फिर उसको जिन्दा करदे

जितनी भी आप गलत ब्यानियां सुनते रहते हैं वे सब उसी अशुद्ध आत्मा की फैलाई हुई हैं जो ईश्वर का रूप छिपाये शरीर धारण किये कौतुकी बना बैठा है। स्त्री पुरुष, पशु पत्ती और वृक्ष जो अनादि कालसे चले आरहे हैं इनके जिन्दा रहने केलिये, हवा, पानी, जमीन, सूर्य आदि की हरवक्त जरूरत है, इनके वगैर यह एक मिनट भी जिन्दा नही रह सक्ते इससे साबित है कि ये चीजें भी उनके साथ साथ अनादि कालसे चली आरही हैं। इन सब चीजों के साथ साथ संसार की वाकी सब चीजों का सम्बंध आपस में एक दूसरे के साथ साथ चला आ रहा है और एक दूसरेकी सहायक बनी हुई हैं। इससे साफ साबित हो चुका है कि यह संसार अनादि कालसे चला आ रहा है, किसी का बनाया हुवा नहीं है। परमात्मा का इनके कामों में कोई लगाव या दखल

किसी प्रकारका नही है। और न ईश्वर जगत का कर्ता हर्ता है। यही अशुद्ध आत्मा ईश्वरका रूप छिपाये हुये, और पुद्गल का जामा पहने हुये संसार का कर्ता हर्ता बना हुया है। कसूर खुद करता है, मगर अपना कसूर मंजूर नही करता है। सारा दोष परमात्मा के मत्थे मंढता है। आप सब दोषों से बरी होजाता है। यह अशुद्ध जीवकी खासियत है। इसकी वजह यह है कि इसके भीतर ११ प्रकार के चोर घुसे बैठे हैं जो इसको हर वक्त भ्रमायें रखते हैं, और किसी वक्त भी चैन से बैठने नही देते।

अब मैं इसके बारे में महा भारत की मशहूर लडाई का जिकर पेश करता हूँ। यह लडाई कौरवों और पांडुवों के दरमियान शुरू हुवी थी। इस का कारण यह था कि दोनों पारटियों में यही ११ प्रकार के चोर घुसे बैठे थे, जिन्होंने इनको उभारा कि वहा-

दुरो ! मत घबरावो हम तुम्हारी मदद पर हैं। इन के होसले दिलाने पर अभिमान और लोभ में आकर बडी घमसान की लडाई हुई। जिसकी वजह से इस लडाई में किरोडहा इंसान मारे गए। जब उनसे पूछा गया कि लडाई का क्या कारण था, जवाव मिला कि परमात्माकी ऐसी ही मरजी थी। अपना कसूर जाहिर नहीं किया कि हमने अभिमान और लोभ के वश होकर युद्ध किया था। परमात्मा के मत्थे सारा दोष मंढ दिया कि यह सब काम परमात्मा की मरजी से हुवा। अब आप विचार करें कि यह युद्ध किसकी मरजी से हुवा। कौरवों और पांडुवों की मरजी से या परमात्मा की मरजी से।

अब आप जर्मन की लडाई का हाल सुनिये। इस लडाई को ज्यादा अर्सा नहीं गुजरा है। जर्मन का वजीर आजम हिटलर अपने महल में बैठा हुवा अपने ११ प्रकार

के खिलाडियों के साथ खेल रहा था । वे उसको कहने लगे कि हे मित्र! हम सब तुम्हारे साथी बने हुए हैं और तुम्हारे पास फौजकी ताकत का कोई ठिकाना नही है फिर तुम इस संसार के शहनशाह क्यों नही बनते तुम्हारे पास किस चीजकी कमी है। इतना सुनते ही उसके अभिमान और लोभ का कोई ठिकाना नहि रहा। बडे जोश के साथ जंगके मैदान में कूदा और अंग्रेजों और अमेरिका के साथ बडी घमसानकी लडाई शुरू की फिर इन के साथ लडता हुवा रूस के साथ जा भिडा जिसका नतीजा यह हुवा कि इस लडाई में बेहद [जिसका कोई शुमार नही] आदमी मारे गए और हटलर का पता नही चला कि किस जगह जान गंवाई और जरमनी के मुल्क पर अमेरिका और रूस ने अपना अपना कब्जा जमालिया। जब पूछा गया कि लडाई क्यों हुवी तो जबाब मिलता है

कि परमात्मा की ऐसी मरजी थी। सही जवाव नही दिया जाता कि अभिमान और लोभ में आकर लडाई शुरू की गई। सारा दोष परमात्मा के मत्थे मंढ दिया जाता है। अशुद्ध जीव की यह खासियत है।

अब आप अपने भारत वर्ष का हाल सुनिये महात्मा गांधी, पंडित जवाहरलाल नेहरू इत्यादि लीडरों ने मिलकर बडी शांति के साथ भारत वर्ष को आजाद कराया। जिनाहने अंग्रेजों के साथ मिलकर अपना पाकिस्थान अलग बनवाया। पाकिस्थान में रहने वाले हिंदुवों को पाकिस्थान से मार भगाया, अब महम्मद अयूब खां वजीर आजम पाकिस्थान, पंडितजीको घुड़की दिखला रहा है कि—काशमीर हमारे हवाला करो वरना हम हमला कर देवेंगे। और चीन के वजीर आजम से दोस्ती गांठ रहा है।

और चीन का वजीर आजम भी भारत वर्ष पर मंडराता फिरता है। पंडित जी बड़ी शांति के साथ सब की धमकियों को सहन करने लग रहे हैं। जब पूछा जाता है कि ऐसी ऐसी बातें कौन करता है ? तो जवाब मिलता है कि—यह सब काम परमात्मा की मरजी से होता है। अपने ऊपर कोई भी उंगली नही रखता। कोई भी आंच नही आने देता। सब दोष परमात्मा के मत्थे मंढ देते हैं। अब आप विचार करें कि यह दुनिया भर के जितने भी काम रोजाना हो रहे हैं, वे राजा और प्रजा के द्वारा ही हो रहे हैं या इन कामोंको परमात्मा करा रहा है या परमात्मा की मरजी से होते हैं। आप बुद्धि-मान हैं विचार करें। कसूर खुद करते हैं। सारा काम संसार का खुद कर रहे हैं, मगर सारा दोष परमात्मा के मत्थे मंढ देते हैं।

अपने ऊपर आंच नही आने देते। यह अशुद्ध जीव की खासयित है। अब आपको असलियत का पता लग गया होगा कि इस संसार का कर्ता हर्ता परमात्मा है या यह दोनों "द्रव्य जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य" इस के कर्ता हर्ता बने हुये हैं।

मैंने आपको हरमुमकिन तरीके से एक दफा नहीं बल्कि बार बार इस पुस्तक में दोहरा कर साबित कर दिखाया है कि इस जगतका कर्ता हर्ता ईश्वर नही है। बल्कि यह दोनो द्रव्य ही जिनका नाम है।

"जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य"

जिनको चेतन और जड कहते हैं संसार के कर्ता हर्ता [छुपे रुस्तम] बने हुये हैं इन के कामों में परमात्मा का किसी प्रकार का लगाव या दखल नही है।

इतना सब कुछ समझाने पर भी आप

न मानें और अपनी जिद् को ही पकडे रहें और परमात्मा की ही रट लगाते रहें कि इस संसारका "कर्ता हर्ता ईश्वर" ही है तो इस रोग का इलाज मेरे पास तो क्या लुकमान हकीम के पास भी नही मिलेगा। इस में ज्यादा वहस मुवाहसा करने की जरूरत नहीं वहस मुवाहसे आज तक न कभी खतम हुये और नही होंगे।

अकलमंद के लिये इशारा ही
काफी होता है।

आतम-कीर्तन

(रचयिता –मनोहर लाल वर्णी)

हूं स्वतंत्र निश्चल निष्काम ।
ज्ञाता दृष्टा आतम राम ।
मैं वह हूँ जो हैं भगवान ।
जो मैं हूँ वह हैं भगवान ।
अन्तर यही ऊपरी जान ।
वह विराग यहां राग—वितान ।
मम स्वरूप है सिद्ध समान ।
अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान ।
किन्तु आश वश खोया ज्ञान ।
बना भिखारी निपट अजान ।
सुख दुख दाता कोई न आन ।
मोह राग ही दुख की खान ।
निज को निज, पर को पर जान ।
फिर दुख का नहीं लेश निदान ।

जिन, शिव, ईश्वर, ब्रह्मा राम।
विष्णु, बुद्ध, हरि जिसके नाम।
राग त्याग पहुंचूं निज धाम।
आकुलता का फिर क्या काम।
होता स्वयं जगत परिणाम।
मैं जग का करता क्या काम।
दूर हटो पर-कृत परिणाम।
ज्ञायक भाव लखूं अभिराम।
हूँ स्वतंत्र निश्चल निष्काम।
ज्ञाता दृष्टा आतम राम।

* अष्ट कर्म *

विज्ञान के अधिक प्रसार से जड पुद्गल परमाणुवों की शक्ति का विकास दिनों दिन बढ रहा है, फल स्वरूप जैनियों का कर्म सिद्धांत भी आज कल के वैज्ञानिकों का विषय अवश्य बनके रहेगा ऐसी पूर्ण आशा है। उस वक्त लोगों की विचार धारायें अपने आप पलटेंगी कि वास्तव में आकुलता सहित जगत के कर्ता हर्ता का काम ईश्वर का नहीं है, किन्तु कर्म रूप हुये उन ही पुद्गल परमाणुवों की करामात है जिसका चमत्कार हम आज के युग में देखरहे हैं। इस चमत्कार को देखते हुवे लोगों की कितनी ही धारणायें और कितने ही सिद्धांतों की मोड अटल नियमों वाले सिद्धांतों की खोज में दौड रही है जैनियो का कर्म सिद्धांत अटल नियमों का साबित होगा इसमें कोई संदेह नही है।

कर्म सिद्धांत के विषय में हमें समझना यह है कि पुद्गल परमाणु कर्म कैसे बन जाते हैं और आत्मसात् होकर उनमें शुभ अशुभ फल देने की शक्ति कैसे आ जाती है। आईये आज हम इसी विषय में विचार करें।

संसारी जीव के साथ कर्मों का सम्बन्ध सदा काल से चला आ रहा है, यदि इनका सम्बंध किसी काल से हुवा माना जाय तो शुद्ध आत्मा की स्वतंत्र और निराकुल अवस्था ही नहीं बनती। हां ! नये नये पुद्गल परमाणु आत्मा के साथ बंधते रहते हैं और पुराने कर्म अपना फल देकर झडते रहते हैं।

जिस प्रकार बहुत सी धूल मिट्टी उड कर किसी चिकनी जगह से जा चिपकती है उसी प्रकार मनमें कुछ सोचने से, वचन से कुछ कहनेसे, और शरीर से कुछ हरकत करने से आत्मा के परिणामों में जो हलन चलन होती है उससे एक खास जातिके पुद्गल

पुद्गल परमाणु आत्मा में आ चिपटते हैं और कषाय के सम्बन्ध से उनमें सुख दुख देने की शक्ति हो जाती है इसी लिये उन्हें कर्म कहते हैं। कर्म आठ प्रकार के होते हैं

ज्ञानावरणीय कर्म

वह है जो जीव के अनन्त ज्ञान गुणको ढके हुवे है। जिस प्रकार तलवार में जंग लग जानेसे उसकी चमक ढक जाती है यदि जंग लगी मैल को जूने से रगड़ कर साफ कर दिया जाय तो वह चमक जो भीतर मौजूद है प्रगट हो जाती है। इसी प्रकार प्रत्येक जीवात्मा में निर्मल दर्पण के समान तीनों लोकों को जानने और देखने की शक्ति है, किन्तु वह शक्ति कर्म रूपी मैल से ढकी हुवी है। जिस प्रकार एक विद्यार्थी पढने में रात दिन खूब परिश्रम करता है, अपने शिक्षकों से भी मदद लेता है फिर भी वह

परीक्षा के विषयों को अच्छी तरह तय्यार नहीं कर पाता इसी कारण वह परीक्षा में फैल हो जाता है, किन्तु दूसरा उसी का साथी थोडा परिश्रम करने पर भी प्रथम श्रेणी में पास होता है यह सब इसी कर्म का चमत्कार है।

ज्ञानियों का अपमान करनेसे, ज्ञानकी विराधना करनेसे ज्ञान होते हुये भी ईर्षा और घमण्ड वश दूसरों को नहीं बतलाने से, तथा ज्ञानके साधनों को नष्ट करने से, स्कूल पांठशालावों को बंद करादेने से, अथवा उसमें बाधा डालने से, इस प्रकार जो व्यक्ति ज्ञान के विकास को रोकता है, ज्ञानके प्रचार में किसी प्रकारकी बाधा डालता है उस के उस प्रकार के नीचे भावों से जो कर्म बंधते हैं वह ज्ञानावरणी कर्म कहे जाते हैं। जो स्वयं उस

जीवके अनन्त ज्ञानपनेकी शक्तिको ढक देते हैं। किन्तु जो व्यक्ति दूसरों को ज्ञान का दान देता है स्कूल खोलता है, पुस्तकें बांटता है, विद्वानों और ज्ञानियों का आदर सत्कार कर उनके द्वारा ज्ञानका प्रचार कराता है उनकी मदद करता है, उनसे प्रेम करता है, जिसकी भावना है कि संसारके सब जीव ज्ञानी और विद्वान बनें, ज्ञान प्रचार के साधनों का विकास करता है, इस प्रकार की उसकी सुन्दर सद्भावनायें स्वयं उसका भी विकास करदेती हैं, उसके ज्ञानावरणी कर्मोंका नाश होने लगता है और आगे चलकर वह महान् ज्ञानी बनजाता है। अपनी अच्छी और बुरी विचार धारावों के अनुसार मनुष्य स्वयं अपना अच्छा और बुरा निर्माण कर लेता है।

दर्शनावरणी कर्म

जिस प्रकार एक मूर्तिके ऊपर पर्दा पडा हुवा है जिससे मूर्तिके दर्शन नही होने पाते, उसी प्रकार दर्शनावरण कर्म देखनेकी शक्ति को ढक देता है, प्रगट नही होने देता। जैसे मोहन दर्शन करने के लिये मंदिरजी गया परन्तु मंदिरजी का ताला लगा पाया जिससे दर्शन नहीं हो सके, इसी प्रकार दर्शनावरण कर्म देखने की शक्तिको ढके रहता है। किसी की आंखे फोड देने से, अपनी दृष्टि का घमंड करने से, देखने के साधनों को मिटाने आदि कामों से इस कर्मका बंध होता है, किन्तु इनके उल्टे कामोंसे तथा आंखोंका अस्पताल खुलादेनेसे, दूसरों के देखने के साधनों को बढाने से, तथा देव शास्त्र गुरुओं के दर्शनों का अधिक लाभ लेनेसे दर्शन गुण बढता है और दर्शनावरण कर्म का ह्रास होता है।

वेदनीय कर्म

उसे कहते हैं जो आत्मा को सुख और दुख दोनों देवे। अर्थात् इस कर्म के उदयसे जीवों को ऐसी सामग्री प्राप्त होती है जिस के कारण वह सुख और दुख दोनों का अनुभव करता है। जिस प्रकार शहद लपेटी तलवार के चाटने से सुख और दुख दोनों महसूस होते हैं यानी शहद चाटने से मिठास का अनुभव होता है परन्तु जीभ कट जाने से कष्ट पहुं-चता है दोनो हालतों में वेदनीय कर्म काम करता है। इसके दो भेद हैं—एक साता वेद-नीय दूसरा असाता वेदनीय। साता वेदनीय कर्म के उदय से शारीरिक सुख मिलता है और असाता वेदनीय कर्म शारीरिक दुखों को देता है। जिन्होंने दूसरों को आबाद किया है, दुखियों की पुकार सुनकर उनकी

सेवा की है, उन्हे सुख पहुंचाया है। वदले में उनको भी शारीरिक सुखों की प्राप्ति होती है। किन्तु जिन्होंने दूसरों को वरवाद किया है, अपने स्वार्थों के लिये उन्हें दुख पहुंचाया है मारा पीटा है, लूटा है, दुखियों की आवाजों को ठुकराया है, क्रोध में या घमंड में आकर दूसरों की जिंदगी को वरवाद किया है, जो दूसरों को दुखी देख कर दया भाव न लाकर खुश हो रहे हैं, तथा दूसरों को सुखी देख कर ईर्षा से जल रहे हैं, वे अपने उन अशुभ भावों के द्वारा ऐसे कर्मों का वंध कर लेते हैं जो उन्हें दुख देते हैं, परेशान करते हैं। कर्म किसी को नही छोडते अपना फल अवश्य देते हैं।

मोहनीय कर्म

जिसके उदय से यह जीव अपने आत्मा के स्वरूपको भूल कर दूसरी चीजों में लुभाजावे। जैसे शराब के पीने वाले आदमी को सुध बुध नहीं रहती, कुछ का कुछ कर बैठता है इसी प्रकार मोहनीय कर्म संसार की चीजों में मोह पैदा कराता है। यह कर्म सब कर्मों का राजा है। जिस प्रकार राजा के मोजूद रहते उसकी सारी सैना बलवान रहती है, किन्तु राजा के नष्ट होते ही सम्पूर्ण सैना भी बलहीन हो जाती है, इसीप्रकार इस कर्मके सत्ता में बैठे रहनेसे सब कर्म अपना असर पूरी तरह से दिखाते हैं किन्तु इसके नष्ट होते ही सर्व कर्मोंका बल भी बेकार हो जाता है। यह संसार में फंसानेवाला सबसे अधिक बलवान कर्म है। यह आत्मिक निराकुल, अतींद्रिय सुखों को भुलाकर जीवको सांसा-

रिक और शारीरिक सुखों तथा दुखों में मगन करा देता है। इसके उदय से आत्मा अपने चैतन्य स्वरूप को भूल कर जड पुद्गल के बने शरीर को सब कुछ समझने लगता है। जिस प्रकार शराब के नशे में चूर हुवा मनुष्य अपनी माता को स्त्री और स्त्री को माता कहने लगता है उसे सही ज्ञान नहीं रहता। इसी प्रकार इंद्रियों के नाशवान सुखोंको आत्मा का सुख समझ कर जो उसमें मगन हो रहे हैं, अपने निज आत्मस्वरूप को भूले हुवे हैं यह सब मोहनीय कर्म की ही माया है।

गलत रास्ता बतलाकर स्वार्थ से भरा हुवा झूठा उपदेश देकर किसी को गुमराह कर देना, आत्मकल्याण के सही मार्ग से हटा देना, सच्चे तपस्वी के संयम और त्याग को ढोंग बताकर उसका अपमान करना, साधु संतों को देखकर उनका मजाक उडाना ऐसे

कामों से मोहनीय कर्म का बंध होता है।
जिससे जीव संसार सागर में भटकते रहते हैं और हमेशां दुख पाते हैं। किन्तु जो स्वयं आत्म कल्याण के मार्ग पर चल रहे हैं। जिनका जीवन संयमी है और दूसरों को भी उपदेश देकर संयम मार्ग पर चला देते हैं, सांसारिक नाशवान विषय भोगों से हटा कर आत्मकल्याण के पवित्र मार्ग की ओर झुका देते हैं। जो सज्जन साधु पुरुषों का त्यागियों और संयमी महात्मावों का विनय आदर सत्कार करते हैं, उनके सद्गुणोंमें अनुरागी हो उनका उपदेश सुनते हैं, और उनकी सब प्रकार सेवा करते हैं, उनके सुन्दर पवित्र जीवन की सराहना करते हुवे खुद वैसा बनने की इच्छा करते हैं, उनके मोहनी कर्म के बंधन ढीले पड जाते हैं, वह नौका के समान तरन तारन बनकर स्वयं तो मोह रूपी बंधन को नष्ट

कर अपना उद्धार करते ही हैं, किन्तु अपने साथ औरों का भी उद्धार कर देते हैं।

आयुकर्म

उसे कहते हैं जो जीवको नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव इन चार प्रकार के शरीरों में से किसी न किसी शरीर में रोके रखे। जैसे एक मनुष्य का पांव काठ में दिया हुवा है वह इधर उधर नही हो सक्ता, उसी प्रकार जिस आयु से जीव वंध जाता है उसे नियत समय तक उसी में रहना पडता है। आयु कर्म चार प्रकारका है। (१) तिर्यंच आयु (२) नरक आयु (३) मनुष्य आयु (४) देव आयु।

मायाचार और छल कपट करने से जीव तिर्यंच वनता है। बहुत आरम्भ और बहुत परिग्रह में फंसे रहकर जीवन विताने से जीव नारकी बनता है। थोडा आरम्भ करने

से और थोडे परिग्रह में ही संतोष करने से जीव मनुष्यों में जन्म लेता है। व्रत पालन करने से, संयम धारण करने से, तपश्चरण करने से तथा समताभावों से, भूख प्यास की बाधा सहनेसे, जीव देवोंमें जन्म लेता है।

नाम कर्म

यदि इस कर्म को विधाता कहा जाय तो अनुचित न होगा। क्योंकि शरीर सम्बंधी अच्छी और बुरी सब प्रकार की रचना यही कर्म करता है। अर्थात् नाम कर्म वह है जिस के उदय से आत्मा तरह तरह के शुभ और अशुभ शरीरों को और उसके छोटे बडे हिस्सों को प्राप्त करता रहता है। जिस प्रकार एक चतुर चित्रकार, मनुष्य स्त्री, पशु पत्ती, देव दानव आदि के मनोहर और डरावने अनेक प्रकारके भावों को पैदा करने वाले चित्रोंको तय्यार करता है, ठीक उसी

तरहसे यह कर्म भी अपनी अच्छी बुरी रचनावों से जीवोंके शुभ अशुभ कर्मोंका फल सामने रख देता है। यों तो इसके सब कामों को ९३ भेदों से वर्णन किया है परन्तु संक्षेप में उन सबको शुभ और अशुभ इन दो भेदों में ही अन्तरभाव कर लिया है।

सुन्दर शरीर बनाना, चपटी नाक वाला, लम्बे दांत वाला, कुबडा काला बनाना तथा सुरीली आवाजवाला, मीठी आवाज वाला आदि तरह से बनाना इसी कर्मका काम है।

कुटिल नीति का, घमंडका, आपसमें भेद व कलह का अनुसरण करने से, झूठे देवों, गुरुवों तथा शास्त्रों को पूजने से, चुगली करने से, तथा दूसरों का बुरा सोचने से अशुभ नाम कर्मका बंध होता है, किन्तु सरलता रखने से गुणी और विद्वानों का यथायोग्य विनय करने से, तथा धर्मात्मावों

को देख कर प्रेम से उमड पडने से शुभ नाम कर्मका बंध होता है।

गोत्र कर्म

यह वह कर्म है जो जीवको ऊंचे कुल में पैदा किया करता है। जिस प्रकार कुम्हार बडे छोटे कई तरह के बर्तन तय्यार करता है, उसी तरह से यह कर्म भी इस जीवको कभी लोक प्रतिष्ठित, धर्म को प्राण समझने वाले उत्तम कुल में पैदा करता है, इसे उच्च गोत्र कहते हैं। और कभी वह उसी जीवको लोकनिंद्य, हिंसा, झूट, चोरी आदि को आजीविका बनाकर पाप कर्मों में सदा रत रहने वाले कुल में जन्म लिवाता है जिसे नीच कहते हैं।

हमने अपने स्वार्थ के लिये दूसरों के सद्गुणों को छिपाया, उनका अपमान किया, उनकी झूटी निन्दा फैला कर सबके सामने

उन्हें नीचे गिराने की कोशिश की और अपने ऐबों को छिपाकर अपनी झूठी प्रशंसा करके दूसरों की निगाह में ऊपर उठने की कोशिश की, किन्तु हमारी ऐसी विचार धाराओं ने हमें एसे कर्मों से जकड दिया कि हम खुद नीचे गिरकर एसी जगह पैदा हुवे जहां हमारा अपमान होने लगा और गंदे काम करने को मिले। यदि हमने दूसरों का आदर सत्कार किया, उनके सद्गुणों की प्रशंसा की, गुणियों के गुणोंका प्रचार कर उनकी कीर्ति को फैलाया, उनको उपर उठाने की कोशिश की और अपने अवगुणों को देखकर ग्लानि की, अपनी निंदा गर्हा, आलोचना की तो हमारे इस प्रकार के विचारोंने एसे कर्मोंको इकट्ठा करलिया जिन कर्मोंने हमें भी ऊपर उठा दिया, अर्थात् हमने एसे स्थान पर जाकर जन्म लिया जहां पर

हमारा आदर सत्कार होने लगा, हमारी प्रतिष्ठा होने लगी। वास्तव में हमारे भाव ही हमें ऊपर उठाते तथा नीचे गिराते हैं। यही इस कर्मका रहस्य है।

अन्तराय कर्म

उसे कहते हैं जिसके उदय से जीवके कार्यों में एसा विघ्न आपडे जिसके कारण वह काम पूरा न हो सके और उसके फलसे वह वंचित रह जावे। जैसे किसी राजाने एक गरीब आदमी को १०० रुपये देनेका हुकुम दे दिया परन्तु वह आदमी जब खजा–नची साहब के पास राजा का हुक्म लेकर गया तो खजानची साहबने कोई गड बड सामने रख कर वह रुपया न दिया, खजानची साहब विघ्नरूप हो गए। ठीक इसी प्रकार यह अन्तराय कर्म जीवके दान, लाभ, भोग,

उपभोग और वल इनको प्राय: सफल बनाने में विघ्न पैदा करता रहता है जिससे उन कामों के फल को जीव पूरा नही प्राप्त कर पाता।

जैसे किसी ने दान देने के लिये एक हजार रुपये का विचार किया, परन्तु रातमें उस रुपये को कोई चोर उठा कर लेगया। सोहन थाली में रखे हुये अनेक प्रकार के सुन्दर और स्वादिष्ट भोजन को करना ही चाहता था कि अचानक बंदर आया और उन भोजनों को उठा कर लेगया, ऐसी हालतों में अन्तराय कर्म ही विघ्न डालता रहता है। इस कर्म के उदय से हम अपना किसी प्रकार का विकास नही कर पाते, हमारी तमाम कोशिशें वेकार हो जाती हैं। हमने दूसरों को तरक्की करते देखकर उनसे ईर्षा की है, उनके विकास में वाधा डाली है, वह वाधा अब रोडा वन कर हमारे रास्ते में खुद

अडचन पैदा कर रही है। दो सगे भाई व्यापार के लिये जाते हैं एक करोडपति बन जाता है किन्तु दूसरा कोशिश करने पर भी दरिद्री ही बना रहता है, एक धनी आदमी लाखों किरोडों की सम्पत्ति को रखते हुये भी बीमारी के कारण भोगों को नही भोग पाता, सुन्दर और रसीले भोजनों को देखकर तरस्ता रहता है केवल मूंग की दालका पानी पीते पीते ही उसके जिंदगी के दिन गुजर जाते हैं। दूसरा एक आदमी खूब पौष्टिक भोजनों को खाने पर भी कमजोर बना रहता है। उसकी शारीरिक शक्तिका विकास नही हो पाता जब कि दूसरा व्यक्ति रूखा सूखा खाना खा कर भी मजबूत पहलवान बनजाता है। यह सब कर्मों की विचित्र माया है। हम दूसरों के सुन्दर भोजनों को देख कर उनकी विद्या

बुद्धि शारीरिक शक्ति को देखकर उनकी धन सम्पत्ति को देखकर ईर्षाभाव से जलेंगे, नष्ट करने की कोशिश करेंगे तो हमारे इस प्रकार के दूषित भाव हमारे लिये ऐसे कर्मों का वंध करादेंगे कि हम स्वयं उन सब चीजों के लिये तरसने लगेंगे । हमारे हर एक कार्य में हमें वाधा पडेगी । हम किसी प्रकारकी तरक्की नहीं कर पायेंगे। जो दूसरो को आगे वढाता है, उनकी मदद करता है, दूसरों के सुखों को, विद्याको, वलको और धन को देख कर प्रसन्न होता है, उनसे प्रेम करता है, वह आगे वढ जाता है, किन्तु जो औरों की विभूति, वैभव को देख कर ईर्षा करता है, उन्हें पीछे ठेलने की कोशिश करता है वह खुद पीछे रह जाता है, उस के खोटे भावों से ऐसे कर्मका वंध होता है जो उसे आगे वढने से रोकता है, उसके मार्ग में रोडा वन वन कर वाधा डालता है ।

यह कर्मों की फिलोसफी है, कर्मों के बंध और उसके फलका स्वरूप है यह जीव अपने विचारों से तथा अपने कारनामों से स्वयं अपने भाग्य को बना लेता है और स्वयं ही बिगाड भी लेता है। अपने किये कर्मोंके अनुसार संसार में सुख और दुखों को भोगा करता है। दोष परमात्मा को देता है, यह उसकी बडी भारी भूल है। अधिकांश इन कर्मों के रहस्य को लोग समझ नही पाते हैं, धोखा खाजाते हैं और नास्तिक बन जाते हैं वह देखते हैं कि एक आदमी अपनी जिन्दगी भर खूब लूटमार करता रहा उसके आचरण खोटे रहे, उसने गरीबोंको, दीनों को जी भर कर खूब सताया, पापोंमें मगन रहा, कभी कोई धर्म कर्म नहीं किया किन्तु इतना होने पर भी वह सुखी है, जिन्दगी भर मौज करता रहा धन सम्पत्ति की उसे कभी कमीं नहीं रही, उसकी जिंदगी

के दिन बादशाही ठाठ में गुजरे जब कि दूसरा आदमी जिसका जीवन सदाचारी है, संयमी है, अपनी जिन्दगी में कभी भूल कर भी पापों की ओर नहीं जाता है, उसका जीवन संतोषी है, परोपकार में दया दान में पूजा पाठमें तथा साधु समागम में उसके जिन्दगी के दिन गुजरते हैं, इतना सुन्दर जीवन होने पर भी वह हमेशां दरिद्री और दुखी रहता है, उसे सूखी रोटी भी मुश्किल से खाने के लिये मिल पाती है।

एसी हालत में लोग कहने लगते हैं कि कर्म कोई चीज नहीं है, यह सब ढकोसला है, लोगों को गफलत में डालने वाली बाते हैं। देखो ! दुर्जन मौज कर रहे हैं और सज्जन दुख उठा रहे हैं। खूब खावो पीवो और मौज करो धर्म कर्म के ढकोसले में मत पडो। किन्तु लोग यह नहीं जानते कि कर्मों का सम्बंध जीव के साथ जन्म जन्मान्तरों

से चला आरहा है, अनेक जन्मोंके कमाये हुवे कर्म उदय में आकर उसे फल देते रहते हैं, यदि पहिले के शुभ कर्मोंका इकट्ठा किया हुवा खज़ाना अभी उस के पास मौजूद है तो भले ही वह कितना भी पाप और अनीति किया करे ऐसा करते हुवे भी उसे सुख मिलेगा। हां! इस जीवन में करनेवाले पाप कर्मोंकी गठडी वह बांधता रहेगा जो आगे चलकर काम आएगी, उसे खोटा फल देगी। इसी प्रकार जिसने पूर्व जन्म में पाप रूपी अशुभ कर्मोंके खजाने को इकट्ठा कर रखा है किन्तु वह इस जीवन में सही रास्ते पर चलरहा है, अच्छे कामों को कर रहा है किन्तु जब तक उन पुराने कर्मोंके खजाने का भुगतान नही करलेगा, उसे सुख नहीं मिल सक्ता है। हां! उसके इस जीवन में किये हुये अच्छे कारनामे आगामी आने वाले जीवन में उसे सुख पहुँचायेंगे। कर्मोंका बडा

विचित्र रहस्य है। कभी कभी कर्मोंका अचानक रद्दो वदल हो जाता है। कोई कर्म ऐसे हैं कि विना फल दिये ही नष्ट हो जाते हैं किन्तु कुछ कर्म ऐसे भी हैं जिनका फल वडे वडे महान पुरुषों को भी अवश्य भोगना पडता है इस विषय को अधिक समझने के लिये हमें कर्मों के रहस्यों का वर्णन करने वाले धर्मग्रन्थों को पढना चाहिये तव हम समझ सकेंगे कि कर्मों की ताकत संसार में सवसे वडी ताकत है। किन्तु इस वातको कभी नहीं भूलना चाहिये कि महा पुरुष अपने आत्म पुरुषार्थ से इन वलवान कर्मों का भी नाश कर देते हैं और अपनी स्वतंत्र आत्मशक्तिको प्रगट करके परमात्मा वन अनन्त कालके लिये सच्चे सुखी होजाते हैं।

अक्सर देखने में आता है कि कभी कभी अचानक शुभ कर्मों का उदय आने पर दरिद्री भी गढा हुवा धन मिलजाने अथवा

लाटरी निकल आने से धनवान हो जाते हैं। और एक सेठ साहूकार राजा महाराजा भी एक दम तीव्र अशुभ कर्मोंका उदय आजाने पर भिखारी बन जाते हैं। यह जीव संसार रूपी वन में कर्मों द्वारा बंधा हुवा घूम रहा है। एक गद्दी तकिया लगाए बैठा है, पचासों सेवक उसकी सेवा कर रहे हैं, अनेक प्रकारके सुखों को भोग रहा है, अमीरों के कुत्ते भी मोटरों में बैठे हुये दूध पी रहे हैं। एक गरीब है दिन भर कडी मेहनत करनेके वाद भी खाने को पेट भर आराम से नही मिल पाता है। एक कुत्ता पुण्यकर्म के उदय से मौज कर रहा है, जबकि उसने अपने किसी निन्दनीय कर्म के उदय से कुत्ते जैसे नीच शरीर को प्राप्त किया है। और एक इंसान के उत्तम शरीर को प्राप्त कर लेने के बाद भी अपने किये पापों के उदय से गलियों में नंगा भूखा प्यासा पडा तडफ

रहा है उस की ओर कोई आंख उठा कर भी नहीं देखता है।

यह सब कर्मोंका चक्कर है। ईश्वरका इन बातों से कोई संबंध नहीं है, ईश्वर तो कर्मों के जालको काटकर संसारके चक्कर से निकल अपने शुद्ध स्वरूपको प्राप्त कर चुका है। अपने अनन्त ज्ञानादि गुणों में मगन हुवा संसारके तमाशे को देख रहा है। किन्तु उसके अन्दर किसी प्रकार की कामना नहीं उठती है।

भजन

(बाबू न्यामतसिंहजी कृत)

सुखी वह हैं जिन्होंने इस,
करम के जालको तोडा ।
जगत जंजाल को छोडा,
सकल दुनिया से मुंह मोडा ॥ १ ॥ टेक
बने आतम से परमातम,
शिवा सुन्दरी से नेह जोडा ।
बताया मोक्ष का मारग,
कुमारग का भरम तोडा ॥२॥ सुखी
वही ईश्वर वही परमातमा,
वही गोड कुछ कहलो ।
हजारों नाम हैं उसके
जो कुछ कहिये सो है थोडा ॥३॥ सुखी
वह जीवन मुक्त है सर्वज्ञ
है और वीतरागी है ।

हितोपदेशी परोपकारी है,
सब विषयों का त्यागी है॥ ४ ॥ सुखी
न कपटी है न मानी,
न क्रोधी है न लोभी है।
न दुश्मन है न हामी है
न द्वेषी है न रागी है ॥५॥ सुखी
'न्यामत' जिसकी उस परमा-
तमा से प्रीति लागी है।
उसी के दिलमें समझो
ज्ञानकी बस ज्योति जागी है ॥६॥ सुखी

ईश्वर का स्वरूप

ईश्वर अर्थात् परमात्मा का स्वरूप ज्ञान गम्य है। इन्द्रियों, मन, और बुद्धि से परमात्मा का दर्शन नहीं किया जा सक्ता, सतसंग तथा स्वाध्याय के बल से जिन के ज्ञान रूपी नेत्र खुल चुके हैं, वह अपनी स्व पर भेद ज्ञान रूपी विवेकिनी बुद्धि के द्वारा परमात्मा के स्वरूप को समझ सकते हैं। इन चर्म चक्षुओं से उसका दर्शन नहीं होता।

जिस प्रकार तालाब के जलमें लहरों की चंचलता से पूर्णमासी के चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब साफ नहीं दिखलाई देता उसी प्रकार हमारा मन विषयकषायों की वास-नाओं में फंसा हुवा अनेक संकल्प विकल्प रूपी तरंगों से चंचल हो रहा है, यही वजह है कि हम अंतर मनकी चंचलता के कारण

अपने शुद्ध परमात्मस्वरूपको नही देख पाते हैं।

आप मध्यान्ह के समय में सूरजकी चमचमाती रोशनी से आकर किसी एकांत अंधेरी गुफामें भीतर चले जाईये तो वहां अन्धकार के सिवाय और कुछ नही दिखलाई देगा किन्तु उसी गुफा में थोडी देर बैठने के बाद वहां रखी हुवी वस्तुवें नजर आने लगेंगी, ठीक यही हाल आत्मदर्शन का है, जब तक मन सांसारिक वासनाओं में तालाब के जलके समान चंचल है, पांचों इंद्रियों के द्वारा मनको लुभाने वाली सुन्दर भोग सामग्रियों को देखकर उन्हे प्राप्त करने की इच्छा करता रहता है, तब तक वह शांत नही हो पाता। ज्ञानी साधु संत योग मार्ग के द्वारा अपने मन और इंद्रियों को भीतर खींचते हैं उन्हें अपने वश में करके ध्यानस्थ

हो एकाग्रता पूर्वक हृदय की गुफा में बैठते हैं तो उतना ही अधिक उनकी चंचलता का और बहिरंग संसार की वासना का नाश होता जाता है, मनोनिग्रह पूर्वक पूर्ण एकाग्रता के बलसे संसार तथा शरीर से अलग निर्लेप बन आत्मध्यानरूपी निर्विकल्प समाधि से सम्पूर्ण घातिया कर्मोंका नाश कर परमात्म स्वरूप की प्राप्ति करलेते हैं। ऐसे महा पुरुष जबतक शरीर है तब तक जीवन्मुक्त अवस्था में रहते हैं। मोह माया का सर्वथा अभाव हो जाने से उनके अन्तरंग में संकल्प विकल्पका अभाव होता है। इच्छा रूपी लहरें नहीं उठती हैं। उनका शुद्ध शांत आत्मा अनन्त गुणों से प्रकाशित होजाता है। अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख और अनन्त बलका धारी वीतरागी परम ऐश्वर्यवान परमात्मा तीन लोकका ज्ञाता

दृष्टा वन जाता है वह राग और मोहका अभाव होनेसे संसार की उलझनों से परे अपने वीतरागी सच्चिदानंदमय स्वरूप में मगन रहता है। अंत में शरीरका भी परित्याग कर अपने परम धाम मोक्ष में चला जाता है। उसे संसारका कर्ता हर्ता वननेकी इच्छा नही रहती। सांसारिक सव वस्तुवों से और कार्यों से उसे कोई वास्ता नहीं। वह चिंतावों और झंझटों से दूर हो चुका है। कर्म जंजीरों का नाश कर जन्म मरण के चक्कर से छूट कर हमेशां के लिये शुद्ध, शांत, निराकुल हो मुक्ति को प्राप्त कर चुका है। वह सव अवगुणोंसे रहित और सव सद्गुणों से भरपूर है अव अनन्त काल तक अपने मोक्ष महल में हीं विराजमान रहेगा।

भजन

(रचयिता–स्वर्गीय बाबू न्यामतसिंह)
सेक्रेटरी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड हिसार)

न रागी हो न द्वेषी हो,
सदानन्द वीतरागी हो,
वह सब विषयों का त्यागी हो
जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥१॥
न खुद घट घट में जाता हो,
मगर घट घट का ज्ञाता हो
वह सद् उपदेश दाता हो,
जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥२॥
न कर्ता हो न हर्ता हो,
नही अवतार धरता हो ।
मारता हो न मरता हो,
जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥३॥
ज्ञान के नूर से पुरनूर,

हो जिस का नही सानी ।

सरासर नूर नूरानी

जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥४॥

न क्रोधी हो न कामी हो,

न दुश्मन हो न हामी हो ।

वह सारे जग का स्वामी हो,

जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥५॥

वह ज़ात पाक हो, दुनिया के

झगडों से मुबर्रा हो ।

आलीमुल गैब हो बे-एब,

ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥६॥

दयामय हो शान्त रस हो,

परम वैराग्यमुद्रा हो ।

न ज़ाबिर हो न काहिर हो,

जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥७॥

निरंजन निर्विकारी हो,

निजानन्द रसविहारी हो ।

सदाकल्याणकारी हो,

जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥८॥

न जगत जंजाल रचता हो,

करम फलका न दाता हो।

वह सब बातों का ज्ञाता हो,

जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥९॥

वह सच्चिदानन्द रूपी हो,

ज्ञानमय शिव स्वरूपी हो।

आप कल्याण रूपी हो,

जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥१०॥

जिस ईश्वर के ध्यान सेती,

बने ईश्वर कहे 'न्यामत'।

वही ईश्वर हमारा है,

जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥११॥

भगवान का उपदेश

यह संसार अनादि काल से है और विना किसी का बनाया इसी प्रकार अनन्त काल तक चलता रहेगा। इस के अंदर जीव और अजीव इन छः द्रव्यों का समुदाय ही मूल रूप से काम कर रहा है। जीव अनन्तानन्त हैं, जिन की कोई गिनती नही, वे भिन्न भिन्न चौरासी लाख प्रकार के शरीरों में मोह-जनित अज्ञानता से फंसे हुये शारीरिक सुखों और दुखों को भोग रहे हैं, वारम्बार जन्म मरण करते रहते हैं। पुद्गल परमाणु भी अनन्तानन्त हैं जो जीव के साथ दूध और पानीके समान मिले हुये जीवकी शुद्ध अवस्थाको अनादि कालसे मलीन किये हुये हैं। यह छः द्रव्य स्वभावसे नित्य हैं, किसी के बनाये हुये नही हैं, किन्तु वह हमेशा अनेक अवस्थाओं में और अनेक रूपों में

बनते विगडते रहते हैं, इस अपेक्षा से अनित्य भी हैं। जिस प्रकार स्वर्ण का नाश नही होता, किन्तु वहीं स्वर्ण अनेक आभूषणों के रूप में बनता और विगडता रहता है, उन आभूषणों के अनेक रूपों का नाश हो जाता है, किन्तु स्वर्ण ज्यों का त्यों बना रहता है। इसी प्रकार छः द्रव्य हमेशा असली हालत को नही छोडते, हां अनेक रूपों में अपना स्वांग बदलते रहते हैं।

जिस प्रकार खाया हुआ भोजन जठराग्नि के द्वारा पचाया जाकर स्वयं ही रस रुधिर मांस और वीर्य बनकर अपने फल को दिया करता है। शरीर को शक्ति प्रदान करके उसको कायम रखता है। उसी प्रकार क्रोधादिक कषायों की गर्मी से आत्मा कार्माण पुद्गल वर्गणाओं को अपने में खींचकर इकट्ठा करती रहती है, वह कर्मपरमाणु पाप और पुण्य रूप में वदल कर शरीर

को सुख और दुख की प्राप्ति कराते रहते हैं। सांसारिक सुख और दुखों के मिलने पर फिर इस जीव के भावों में राग द्वेष क्रोधादि कषायों की गर्मी पैदा होती है, जिसके द्वारा जीवात्मा फिर दोबारा कार्माण पुद्गल परमाणुओं को खींचता है और कर्मोंका बंधन करता रहता है। इस प्रकार अरहट की चरखी के समान संसार में फंसा हुवा यह मोही जीव अनादि कालसे घूम रहा है। कोई परमात्मा किसी को सुख दुख नही देता है।

यह मनुष्य कुसंगति के प्रभावसे खोटे कर्म करता है, गन्दे विचार बनाता है, पाप कर्मों का उपार्जन कर अपने संसार को दुखी बना लेता है, जब कि सत्संग के प्रभाव से अपने विचारों और कर्मोंको अच्छा बनाते हुये पुन्य कर्मोंका उपार्जन कर सांसारिक सुखों को भोगा करता है। यह विचित्र मायावी संसार जीव के अच्छे और बुरे भावों तथा कर्मों से

ही उसके लिये अच्छा और बुरा फल देने वाला बन जाता है, ईश्वरका इन बातों से कोई मतलब नहीं है।

मुक्त जीव या शुद्ध आत्मा परमात्मा भी अनन्तानन्त हैं जो पहिले कभी संसार चक्कर में फंसे हुये थे, उन्होंने सच्चे गुरुवों के उपदेशों से, अपने आत्मिक शुद्ध स्वरूप को पहिचाना, स्वपर भेद विज्ञानमयी बुद्धि पूर्वक आत्मध्यान रूपी अग्नि को प्रज्वलित किया, जिससे उनके पाप और पुन्य रूपी दोनों प्रकार के कर्म जल कर नष्ट होगए तथा शुद्धात्म परमात्म स्वरूप प्रगट होगया, एसे परमात्मा अनंतानन्त हैं। सबकी सत्ता भिन्न भिन्न है, कोई किसी में मिलता नहीं है। सब ही नित्य अतीन्द्रिय स्वात्मानन्द का भोग करते हुये संसार के पचडे से अलग रहते हैं, फिर कभी जन्म मरन के चक्कर में नहीं फंसते।

मुक्ति प्राप्त करने का साधन यह मानव शरीर ही है इसी मानव शरीर के द्वारा जीव अपना आत्मविकास कर सक्ता है, अतः हे संसार के प्राणियो ! इस मानुष शरीर को प्राप्त करके तुम हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पांच पापों का त्याग करो, और अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, और अपरिग्रह इन पांच व्रतों को धारण करो, क्रोध मान माया और लोभ यह चार कषाय आत्मा को मलीन करनेवाले तुम्हारे शत्रु हैं, इनका नाश करके क्षमा, नम्रता, सरलता और संतोष इन सद्गुणों को अपनावो, ईषा, राग, द्वेष तथा मोह के भावों को यथाशक्ति कम करो, तुम्हारी आत्मा वीतराग अनन्त निर्मल गुणों से भर पूर है, अनन्त शक्तिशाली है। परमात्मा बनने की ताकत तुम्हारी आत्मा में मौजूद है, संसार के मोह मायामय चक्कर में न फंस कर उस ताकत का संयम और

त्याग के द्वारा विकास करो। सांसारिक मित्र, सम्बंधी, और कुटम्बी सब स्वार्थ के साथी हैं। अपना मतलब निकलने के बाद कोई नही पूछता है। अतः इनकी ममता में फंस कर पापों के द्वारा अपने शुद्धात्म स्वरूप को मैला मत होने दो। राग द्वेष और मोहसे कर्म आकर बंधते हैं, तथा वीतराग निर्मल आत्मसमाधि से उन कर्मोंका नाश होता है जिससे हम सांसारिक दुखों से मुक्त हो जाते हैं हमें अपने आत्माके पुरुषार्थ को हमेशा बढाते रहना चाहिये।

भगवान की पूजा भक्ति तथा संत साधुवों का सत संग, उनकी सेवा दान यह सब क्रियायें अपने भावों को शुद्ध करने तथा सदाचारी जीवन बनाने के लिये करो, सांसारिक सुखों की इच्छा से नहीं। यदि तुम्हारा जीवन गंदा और दुराचारों से दूषित है तो तुम कभी सुखी नही हो सकोगे जब कि सदा-

चारियों और संयम का पालन करने वाले धर्मात्मा मनुष्यों को वैभव सुख सम्पत्ति अपने आप प्राप्त होते हैं। तुम्हारे निर्मल उत्तम विचार और सुन्दर आचरण तुम्हें ऊपर उठाकर सुखी करेंगे लोक तथा परलोक में सब प्रकार से तुम्हारी उन्नति होगी।

भोजन शुद्ध और सतोगुणी करो, पानी छान कर पीवो, शराब तथा नशीली चीजें, मांस, शहद इनका सेवन करने से मन और बुद्धि मलीन हो जाती है, हमारे खान पान से हमारे मन बुद्धि और शरीर का निर्माण होता है। यदि हमारा खान पान गंदा तमोगुनी होगा तो हमारी बुद्धि खोटी बनेगी, मन दूषित विचारों से भरा रहेगा। और यदि शुद्ध ताजा सात्त्विक भोजन करेंगे तो मन तथा बुद्धि निर्मल रहेगी, शरीर निरोगी रहेगा, हमारे जीवन का उत्तम विकास होगा।

तुम अपने रहन सहन को कौटुम्बिक

जीवन को वेश भूषा तथा अपने स्वभाव को अपनी बोली और आचरनों को इतना सुंदर और मधुर बना लो कि तुम्हारे पडोसी तथा सम्बंधी जन तुम्हारे उस सुन्दर जीवन से प्रभावित होकर शिक्षा लें और खुद भी उसी प्रकार सुन्दर तथा उत्तम जीवन विताने लगें, पापों का त्याग करदें। तुम्हारा पवित्र आदर्श न्याय और नीतिसे तथा ईमानदारी से भरा जीवन हजारों उपदेशकोंसे भी अधिक संसार को सुधारेगा। तुम्हारी आत्मा पवित्र होगी तो तुम आत्मा के पवित्र, निर्मल आनंद मय लोक में पहुंचोगे। संसार में रहते हुये भी कीचड में कमल के समान निर्लेप रहने की कला, साधु समागम से तथा धर्म ग्रंथों के स्वाध्याय से प्राप्त होगी। आफतों और तूफानों के बीच रहते हुये भी अन्तःकरण को शान्त रखते हुये, मुसकराते रहना यह एक सबसे उत्तम साधना है।

ज्ञानी अपनी ज्ञान चेतना के बल से संसार के स्वरूप को जानता है। संसार में रहते हुए, कर्म करते हुये भी आसक्त नही होता, उसका अन्तः करण शांत रहता है। वह निराकुलता पूर्वक संसार यात्रा को तय करता है। उसे अशुभ कर्मोंका वंध नही होता और यदि शुभ कर्मों को वांधता भी है तो उसके द्वारा ऐसी योग्यता प्राप्त कर लेता है जिसके मिलने पर संसार सागर से अपना उद्धार कर सके। वह संसार में रहता हुवा भी भीतर से विरागी हो संसार से हटता चला जाता है। जब कि मोही अज्ञानी प्राणी इस संसार रूपी दल दल में अपने को अधि-काधिक फंसाता जाता है, उसकी भोगों की कामनायें बढती जाती हैं और उसे चैन नही लेने वह देती, उनकी पूर्ति के लिये पापों को करने लगता है, उसका सारा जीवन परे-शानी से भरा हुवा आकुलता सहित वीतता

है। इसलिये उत्तम आत्मज्ञान को प्राप्त करो, सदाचार का पालन करो, आचार विचार, खान, पान, शुद्ध रखो, सत संग और स्वाध्यायके बल से अपने ज्ञान रूपी नेत्रों को खोलो, तुम्हें छः द्रव्यों का संसार नाटक दिखलाई देने लगेगा। इस संसारके नाटक को देखने के लिये विवेक रूपी नेत्रों की जरूरत है। वह नेत्र सत संग और स्वाध्याय से ही प्राप्त होते हैं। जिसके द्वारा जीवको परमात्म पद—मोक्ष की भी प्राप्ति हो जाती है और वह संसार के चक्कर से छूट जाता है।

भगवान के उपदेशों का निचोड़
और
* हमारा कर्तव्य *
११ प्रकार के चोर

राग-द्वेष-हिंसा-चोरी-झूठ-कुशील-परिग्रह क्रोध-मान-माया-लोभ इनको पाप कर्म अथवा खोटे कर्म कहते हैं।

इन ११ प्रकार के चोरों ने संसारी जीवों को मीठा लोभ देकर अनादि काल से अपने जाल में फंसा रखा है। जिसके कारण यह संसारी जीव संसार और परिवार के झगडों और झंझटों में उलझ रहे हैं उनके निमित्त से होने वाले अनेक संकल्प विकल्पों और नाना प्रकारकी चिंताओंमें फंसे हुये दुख भोग रहे हैं। किसी वक्त भी इनको चैन नहीं है, हरवक्त कल कल मची रहती है और

आधि व्याधि के शारीरिक और मानसिक दुःख सहते रहते हैं। यह संसार महान दुखों की खान है। इसमें कोई भी सार वस्तु नजर नही आती। यह त्यागने योग्य है। अत एव—

भाईयो! और बहनो!

अगर आप सुख और शांति प्राप्त करना जन्म मरण के चक्कर से छूटना और अपनी आत्माको परमात्मा बनाना चाहते हैं, तो ऊपर कहे हुये ११ प्रकार के भांति भांति के लुटेरे चोर उचक्के डाकुवों और बुलडोग कुत्तोंको, जिनको तुमने अपना हितैषी यार और मित्र बनाया हुवा है, और जिनसे चुपके चुपके अपना काम सिद्ध करते रहते हो, और काम सिद्ध होने के बाद फिर अपनी काया में ही छिपाये रखते हो और फिर इनकी जरूरत पडी इनको बुलाया और अपना काम सिद्ध किया और फिर अपनी काया में ही छिपा लिया सदाके लिये छोडो

याद रखना भूल मत जाना

शास्त्र पढने और सुनने का तवही आप को लाभ पहुंचेगा, और तवही मुझको मेरे इस कार्य में सफलता प्राप्त होगी जव आप दिलोजान से इन ११ प्रकार के चोरों को जो आपकी काया में छुपे वैठे राज्य कर रहे हैं निकालने की कोशिश में लगे रहोगे। अगर इनसे प्यार करते रहे तो याद रखना कि यह तुम्हारे आत्मधन [यानी दर्शन और ज्ञान] को चकनाचूर और मटियामेट करते रहेंगे, कभी तीन लोकका ज्ञाता और दृष्टा नही बनने देंगे, और न कभी सुख और न शांति प्राप्त होगी, वल्कि यह ११ प्रकार के डाकू हमेशा जन्म मरन के चक्कर में फंसाते हुये नये नये शरीर धारण कराते हुये तुमको चौरासी लाख वन्दीखानोंमें भ्रमाते हुये दुख पहुंचाते रहेंगे।

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः॥

कविता

आत्माके अंदर छुपे बैठे हैं ११ चोर चोर ।
एक राग एक द्वेष पांचपाप चार कषाय चोर ।
यहीं हैं सव पाप कर्म
जिनको सब कहते खोटे कर्म ।
त्यागो इनको भाईयो और बहनो,
होय तुम्हारा सफल जन्म ॥

निवेदक—कुड़मल जैन

हमारा कर्तव्य

चार कषायों के वश प्राणी
पंच पाप में प्रीति करे ।
राग द्वेषको मित्र बना कर,
काल अनादि से दुःख भरे ।
ग्यारह को परिवार बना कर,
इनके रंग में फूला है ।
पर को अपना बनाय फिरता,
आतम रूप को भूला है ॥ १ ॥
अब तक इसने अपनी भूलको,
भूल समझ नही छोडा है ।
जड कर्मों से बंधा हुवा,
इन ही से नाता जोडा है ।
आज पुण्य से षट द्रव्यों,
और आठ कर्म का मर्म सुना ।
अब अपने निज पद को सोचो,
जिससे छूटे जग फिरना ॥ २ ॥

इस मानव जीवन का सबसे,
बडा कडा कर्तव्य यही।
नर से नारायण बनने की,
शक्ति इसी में समा रही।
तुम छोडो चार कषायों को,
पांचों पापों का त्याग करो।
चिर भूले अपने शुद्ध रूप को,
पहचानो और प्राप्त करो॥ ३॥
प्यारी चीजों में नित प्रीति,
राग भाव गाया जाता।
दुखदायी चीजों में नफरत,
द्वेष भाव माना जाता।
अच्छी बुरी कल्पना ही है,
चीजों में कोई भेद नही।
अच्छी बुरी, बुरी भी अच्छी,
बनने में कुछ देर नही॥ ४॥

इन ग्यारह चोरों दुष्टों ने,
आत्मा का धन लूटा है।
दुखी हुआ वह जग में फिरता,
उसका निज घर छूटा है।
जीवन का कर्तव्य यही कि,
इनके संग का त्याग करै।
कर्मों की यह मैल हटा कर,
अशुद्ध आत्मा शुद्ध करै ॥ ५ ॥

अब मैं संसार का नक्शा समाप्त करता हूं और आशा करता हूं कि आप उस पर विचार करेंगे, और उसमें से आत्मकल्याण की सामग्री ढूंढ निकालेंगे।

—कुड्डमल जैन

मूर्ति पूजन

अब मैं आपकी दृष्टि मूर्ति पूजन के विषयकी ओर खींचना चाहता हूं। बहुत से भाइयों का ख्याल है कि मूर्ति पूजन से कोई लाभ नही, वह तो कोरी पत्थर पूजा है। उनका ऐसा ख्याल करना सरासर विवेक से रहित है, उनको पता ही नही है, कि मूर्ति पूजन किसको कहते हैं, और उसमें क्या रहस्य है? यदि उनको उसके रहस्य का ज्ञान हो जाय तो वे अपनी पहिली धारणा को अपनी भूल समझ कर आगे के लिये सच्चे उपासक बन जावें।

मूर्ति-पूजा असल में गुण पूजा-या पद पूजा है। कागज पर राजमुद्रा को अंकित देख राजपद की आज्ञा मान भारत वर्ष और अन्य देशों में उन राजमुद्रा अंकित

नोटों के द्वारा अर्चों खर्चों का व्यापार चल रहा है । यह क्या है? मूर्ति पूजा ही तो है। भारतीय धार्मिक संस्कृति के अनुसार दिवाली पर्व पर जो लक्ष्मी पूजन किया जाता है वह भी मूर्तिपूजन ही है !

भीलपुत्र एकलव्य वाण विद्या सीखने के लिये आचार्य द्रोण के पास जाता है, किन्तु उसे वे नीच वता कर सिखाने से इंकार कर देते हैं, तव वह उनकी मिट्टी की मूर्ति बना कर उसे असली द्रोणाचार्य समझता है और शिष्य भाव से वाण विद्या सीखना प्रारंभ कर देता है । वह कुछ दिनों में बाण वेधन कला में इतना निपुण बन जाता है कि उसे देख पांडव-पुत्र अर्जुन आश्चर्य में पड जाता है और अपने गुरु के पास पहुंचता है और उनसे लडता है कि-महाराज ! आपने मेरे साथ पक्षपात किया है, जो बाण बेधन कला आपने एकलव्य को सिखाई है, वह

मुझसे छिपा रखी है। दोनों एकलव्य के पास जाते हैं, और उन्हें मालूम होता है कि उसने तो आचार्य की मूर्ति बना कर यह विद्या सीखी है। यह मूर्ति पूजा का ही बडा माहात्म्य कहा जा सक्ता है ।

इसी निष्ठा और भावना से हम उन तीर्थंकरों और महापुरुषों के, (जिन्होंने अपने सांसारिक सुख और विभव को तुच्छ समझ कर परम वीतराग और सर्वज्ञ पद प्राप्त कर परमात्मा का पद पाया है, और संसार के दुखी प्राणियों को भी दुःखों से बचाया है) भक्त बन कर उनकी मूर्ति में हम साक्षात् उन्हीं के तो दर्शन करते हैं, और उनके कल्याणकारी गुणों को अपने में उतारने का प्रयत्न करते हैं। याद रखिये ! महान् आत्माओंका आदर्श मूर्ति स्थापना के सिवाय दूसरे तरीके से बनता ही नही है, और विना

आदर्श बनाये हम महापुरुषों के गुणों को अपने में ला नहीं सके। संसार के सब मनुष्य, सब जातियां और सब धर्म भिन्न भिन्न तरीकों से इसे मानते हैं, फिर उसे पत्थर पूजा या जड पूजा बतलाना कहां तक न्याय संगत कहा जा सका है ?

आप किसी आर्य समाज के मंदिर में जाइये, आप देखेंगे कि वहां कई चित्र स्वामी दयानंद सरस्वतीजी के और श्रद्धानंद के टंगे हुये हैं, उनके अनुयायी भक्त उनको बडी श्रद्धा से देखते हैं, हाथ जोड कर नमस्कार करते हैं और सिर झुकाते हैं, यह क्या है, मूर्ति पूजा या कुछ और ?

विश्व के पूज्य महात्मा गांधी की चिता भूमि पर बडे बडे देशों के महामंत्री अपनी भारत यात्रा में भारत की राजधानी जब दिल्ली में पहुंचते हैं तो सब से पहिले उस चिता भूमिके दर्शन करने जाते हैं और श्रद्धा

तथा पूज्य भाषा से पुष्प चढाते हैं। यह भी तो मूर्ति-पूजा ही है।

सन १६११ में देहली दर्बार के समय श्रीमान् पंचम जार्ज भारत पधारे थे-लाखों जन समूह के बीच में जब उन की सवारी दिल्ली के चांदनी चोक में घंटा घर के पास पहुंची, वहां वे मल्का विकटोरिया की मूर्ति को देख कर सवारी से उतरे और टोप उतार कर सिर झुकाते हैं। यह क्या है मूर्ति पूजन ही तो है।

अमृतसर में आप सिक्खों के गुरुद्वारे में पहुचिये, वहां आप उन के गुरु नानक जी के चित्र और उन के बनाये हुए बडे बडे धर्म ग्रंथ देखेंगे। उनके भक्त लोग उन के दर्शन करते हैं, और बडी श्रद्धा से फूल चढाते हैं, यह भी तो मूर्ति पूजा ही है।

अन्त में हम एक कवि श्रेष्ठ स्वर्गीय बाबू न्यामतसिंह जी का एक भजन पेश

करते हैं। आप उसमें देखेंगे कि उन्होंने किस वारीक दृष्टि से मूर्तिपूजा को सिद्ध किया है। उन्होंने अपनी इस कविता को वहुत अर्सा हुवा, अम्वाले में एक विराट उत्सव में, जिस में कि अनेक वडे वडे अंग्रेज, डिपटी कमिश्नर और उच्चपदाधिकारियों का मजमा था, पढ़ कर सुनाई थी, उसे सुन कर उन सव सभ्य पुरुषों ने कविता की और उन की सूक्तों की खुले दिल से प्रशंसा की थी।

卐

मूर्ति पूजन कविता

लेखक—स्व० कविशिरोमणि बाबू न्यामतसिंह जी जैन,

जहांके काम बतलानेका

सामां एक मूरत है।

गरज मतलब बरारी की

नही कोई और सूरत है ॥१॥

शकल सूरत शबीह तसवीर

फोटो अक्स कुछ कहलो।

यह सारे नाम हैं उसके

कि जिस का नाम मूरत है ॥२॥

किताबों में यही मूरत,

अगर हरफों की सूरत है।

तो उकलेदस में यह

लाइन की और नुक्ते की मूरत है ॥ ६ ॥

कहीं ए बी कहीं अ-आ

कहीं पर अलिफ-बे सारे
यह समझने के जरिये हैं
यह बतलाने की सूरत है ॥ ४ ॥
जरा चल कर मदर्से में
हिंद का देख लो नक्शा ।
कहीं शहरों का नुक्ता है
कहीं दरया की सूरत है ॥ ५ ॥
नजर जिस दम पडे साधु
सती गणिका के फोटो पर ।
असर दिल पर वही होता है
जैसी जिसकी मूरत है ॥ ६ ॥
जैन साइंस में भी
स्थापना निक्षेप कहते हैं ।
उसी बुनियाद पर जिन–
मंदिरों में 'जिन' की मूरत है ॥ ७ ॥
जरा तुम गौर कर देखो

यह मूरत शांति मूरत है।
यह है वैरागता सम्वे-
गता की शांति मूरत है ॥ ८ ॥
रहनुमा जग हितैषी की
हमें ताजीम लाजिम है।
अदब ताजीम करने की
यही तो एक सूरत है ॥ ९ ॥
खिंचे नही दायरा हरगिज
बिना नुकते की मूरत के ।
ध्यान के दायरे के वास्ते
भगवत्त की मूरत है ॥ १० ॥
शहन शाह जार्ज पंचम
हिन्द में तशरीफ जब लाए ।
झुका दिया सर जहां मल्का
महाराणी की मूरत है ॥ ११ ॥
अदब से जाके बोसा

देते हैं मक्का मदीने में ।

वहां आसवद की मूरत है

यहां भगवत की मूरत है ॥१२॥

आर्य्य मंदिरों में भी

शबीह दयानंद स्वामी की ।

लगी है सर से ऊपर यह

अदब करने की सूरत है ॥१३॥

वेद अंजीलोकुरान

गो कागज़ के टुकडे हैं ।

मगर एक धर्म का रस्ता

बताने की तो सूरत है ॥१४॥

अमानत ऐसा फरमाते

हैं, अपना दिल जमाने को ।

खुदाकी याद का बहतर

तरीका बुत की मूरत है ॥१५॥

चांदमारी में भी दिवार पर
नुक्ता लगाते हैं।
निशाने को निगाह
ठहराने की एक सूरत है ॥१६॥
सलामी फौज देती है
झुका सर बोसा देते हैं।
जहां पर तख्तशाही या
ताजशाही की मूरत है ॥१७॥
लीडरों के शहनशाहों के
राजावों और गवरनरों के।
हजारों बुत बने हैं
दर असल मिट्टी की मूरत है १८
अदब करते हैं सब इन का,
कोई तोहीन कर देखे।
सजा पाए अदालत से
गो बुत मिट्टी की मूरत है १६

खडावों राम के चरणों की
रख कर तख्त के ऊपर ।
भरत ने क्यों झुकाया शीश
वह लकडी की मूरत है ॥२०॥
देख लो जाके गिरजा में
रखी है सलीब की मूरत ।
यह सब ताजीम के रस्ते
अदब करने की सूरत है ॥२१॥
सभी मंदिर शिवालय
मसजिदें कब्रें बुजर्गों की ।
हैं क्यों ताजीम के काबिल
हर इक मिट्टी की मूरत है॥२२॥
सभी ताजीम करते हैं
हुसैन हजरत के लाशे की ।
ताजिया जिस को कहते हैं
जनाजे की वह मूरत है ॥२३॥

शाह फर्जी फील घोडा
यह गो लकडी के टुकडे हैं।
मगर शतरंज की बाजी
लगाने की तो सूरत है ॥२४॥
करें सिजदा अगर पत्थर
समझ कर तब तो काफिर हैं।
कुफर क्यों आएगा, समझे
अगर रहबरकी मूरत है ॥२५॥
हजारों और भी मूरत
नजर आती हैं दुनिया में।
सभी अच्छी बुरी मूरत
हैं जैसी जिस की सूरत है ॥२६॥
जुदागाना असर दिल पर
हर इक मूरत का होता है।
फिर किस तरह कहते हो
यह नाकाम मूरत है ॥ २७ ॥

इसे मानो या न मानो
यह तो साहिब आपकी मरजी ।
'न्यामत' कोई बतलादे
कि क्यों नाकाम मूरत है ॥२८॥

भगवान का उपदेश

हे संसारी प्राणियो! मैं भी खुद इन ११ प्रकार के चोरों के जाल में फंसा हुआ, जन्म मरन के दुख सहता हुआ, नये नये शरीर धारन करता हुआ, चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करता हुआ, संसार चक्कर का कर्ता हर्ता बना हुआ, अनादि काल से संसार चक्कर में घूमता हुआ महा दुख भोग रहा था। जब मैंने इन चोरोंके भेद को समझा कि इन्होंने संसारी जीवों को अपने जाल में फंसा कर संसार में नाटक खेल रहे हैं और इनको मोक्ष की तरफ आंख उठा कर नहीं देखने देते तब मैंने इनके फंदे को तोडा और आत्म बल के द्वारा तप रूपी अग्नि में इनको भस्म कर दिया और केवल ज्ञान हासिल करके

मोक्ष पद प्राप्त कर लिया । अब मैं संसार का कर्ता हर्ता नहीं रहा, अब मैं तीन लोक का ज्ञाता दृष्टा परमात्मा बन कर सुख और शांति का राज्य भोग रहा हूँ। हे संसारी प्राणियो ! अगर तुम अपना कल्याण चाहते हो और इस महा दुखी संसार समुद्र से पार होना चाहते हो और जन्म मरन के चक्कर से छूटना चाहते हो और हमेशा के लिये सुख और शांति प्राप्त करना चाहते हो हो तो इन ११ प्रकार के डाकुओं को जिन को तुमने हितैषी और यार बनाया हुआ है और जिनसे तुम चुपके चुपके अपना काम सिद्ध करते रहते हो और काम सिद्ध होने के बाद फिर उनको, जो सांप की तरह तुम्हारे डंक मारते रहते हैं अपनी आस्तीन में ही छिपाये रखते हो, जड मूलसे अपनी आत्मा

के अंदर से बाहर निकाल कर फैंक दो। वरना याद रखना ! अगर तुम इनसे प्यार करते रहे तो यह तुम्हारे आत्म धन को चकना चूर और मलया मेट हर वक्त करते रहेंगे और तुमको कभी भी तीन लोक का ज्ञाता दृष्टा परमात्मा नहीं बनने देंगे और न तुमको कभी सुख और शांति प्राप्त होगी बल्कि ११ प्रकार के डाकू हमेशां जन्म मरन के चक्कर में फंसाते हुए तुमको नये नये शरीर धारन कराते चौरासी लाख योनियों में भ्रमन कराते महा दुख पहुंचाते रहेंगे।

कविता

आत्मा के अंदर छुपे बैठे हैं ११ चोर चोर
१ राग १ द्वेष पाँच पाप चार कषाय चोर।
यही हैं सब पाप कर्म जिनको कहते खोटे कर्म
त्यागो इनको भाई बहनो होय तुम्हारा सफलजन्म

खांसी बलगम

जुकाम का

आज़मूदा और शर्तिया इलाज

बिना दवा।

जो भाई और बहनें ऊपर कही हुई बीमारी से बहुत ज्यादा दुखी हो रहे हों, और रात दिन खांसी सता रही हो, किसी वक्त भी चैन न लेने देती हो, और बलगम हर वक्त निकलता रहता हो, और दवाईयां खा खा कर थक चुके हों, वे मेरे लिखने पर ध्यान दें जबान को काबू में करें खोराक पर कंट्रोल

करें शर्तिया फायदा होगा सौ फी सदी आराम होगा, आजमायें और लाभ उठायें। अगर परहेज न करसके तो इस इलाज की तरफ ध्यान न करें।

परहेज

जो भाई बीडी सीगरेट हुक्का पीते हों फौरन ही त्याग करें। कई भाई बीडी सीगरेट पीने के आदी थे, खांसी बहुत सताती थी दवाई खाखा कर थक गये थे मगर खांसी में आराम नही होता था, बीडी सीगरेट छोडने पर १५ रोज में ही खांसी दूर हो गई।

जो बीडी सीगरेट नही पीते हैं वे खोराक का परहेज करें।

घी, दूध, दही और लस्सी बंद करें। मिठाई और मीठा खांड, बूरा, चीनी, गुड

शक्कर हर प्रकार का मीठा बंद, तेल व तेल से बनी हुई सब चीजें बंद, आचार मुरब्बा आदि सर्व प्रकार का बंद किया जाता है। खटाई और लालमिर्च बंद, सिर्फ खाने के लिये रूखा फुलका, गंदम, चना, बाजरा और मकई जो भी पसंद हो खायें। साथ में दाल और सब्जी खूब खायें, साग जो भी पसंद हो खाये साग या दाल में थोडा घी (छौंक के वक्त डाल सक्ते हैं, ज्यादा नही) फल खूब खायें, उन के रस पीयें, नारंगी माल्टा मौसमी का रस खूब पीयें फिर खांसी और बलगम को देखें किधर रफू चक्कर होते हैं नया बलगम पैदा नही होगा जितना मौजूद है या आइंदा पैदा होने वाला था वह सब का सब खांसी के साथ निकलना शुरू होगा। १५ रोज के बाद तुमको यह महसूस होने लगेगा कि खांसी और बलगम में कमी होती जा रही है। एक

महीना गुजरने पर तुम को आठ आने भर जरूर फायदा पहुंचेगा, डेढ माह गुजरने पर और ज्यादा लाभ और दो माह में बारह आने या पूरा आराम होगा अगर कुछ कमी रह गई तो तीन माह तक खांसी और बलगम खतम हो जायगा फिर कोई शिकायत बाकी न रहेगी। यह बात शरीर की बीमारी पर मुनहसर है कि किसी को दो माह में किसी को डेढमाह में और किसी को तीन माह तक पूरा आराम जरूर हो जायगा, खांसी और बलगम का नाम व निशान बाकी न रहेगा मगर उसके बाद परहेज बराबर एक साल तक रखना होगा, एक साल तक आप को कोई शिकायत बलगम व खांसी की न होगी आराम होनेके तीन माह बाद आप दलिया घी थोडा, दूध वगैर मीठा का डाल कर खा सकते हैं ऐसा करने से हमेशा बीमारी

से निजात हासिल करेंगे। इस बीमारी के साथ साथ (अगर एनीमा किया जावे) तो बहुत बीमारियों में आप को लाभ पहुंचेगा सोनेपर सुहागा का काम करेगा। अगर न कर सकें तो खास जरूरत नहीं। अगर अनीमा करें तो हफ्ते में या दस रोज में एक दफा पानी रोक कर कर सक्ते हैं किसी प्रकार का नुक्सान न होगा।

भजन

अरे मन मान मेरी कही, तज पाप चेत सही,
संसारमें तेरो कौन है ? क्यों मूढ पन्न गही ॥
है परम ब्रह्म तुहीं, सर्वज्ञ ज्ञान मई,
सम्यक्त बिन भयो भ्रष्ट तू चिरकाल
विपत्ति सही ॥ अरे मन० ॥ १ ॥
स्वर्गादि विभव भई, तृष्णा तऊ न गई,

तो ओस सम—नर भोगतैं, यह रोग जाय नही।
अरे मन ॥ २ ॥ किन सीख तोहि दई, कर
वमन फेर चही, मत खाय चतुर सुजान।
यह बहु बार भोग लई ॥ अरे मन ॥ ३ ॥
है समझ मीत यही, तजि भोग राखि रही,
कहै 'नयनसुख' रहो विमुख इन से,
सीख सुगुरु की कही। अरे मन० ॥ ४ ॥

भजन

तेरी नौका लगी है सुघाट
किनारे लागी मत ना डबोओ जी ॥ टेक ॥
हर करम भरम, धर परम धरम
मिथ्यात करमसे हाथ उठा।
चिर काल जगत में दुःख भरे
जिस भांति बने ले पिण्ड छुटा।
भा भाव अनित्य अशर्ण सदा
संसार रहटसा चलता है।
एकत्व दशा समझो अपनी

वहुवत्व से क्यों नही टलता है।
तुम अशुचि अंग के संग शुद्धता
अपनी ना खोओ जी ॥
तेरी नौका० ॥ १ ॥

दे आश्रव वाट में संवर डाट
परकाश महावल, कर्म खिपा।
ये पुरुषाकार है कारागार,
तू कैद पडा है वात सफा।

है दुर्लभ वोध, ले सोध जरा
जिन धर्म की प्राप्ति दुर्लभ है।
ले तत्त्व अतत्त्व विचार हृदय
इस वक्त तुझे सव सुलभ है।
तैं पाई नर पर्याय, अगामी मत कांटे
वोवओ जी, तेरी नौका ॥ २ ॥

ये भोग भुजंग भयानक हैं
क्रोधादि अग्नि यहां जलती है।
तुम जलते हो, न संभलते हो
ए यार! वडी यह गलती है।

जो इन को त्याग वसे वनमें
वे मुक्ति-वरांगन वरते हैं।
निर्वाध अचल सुख पाते हैं वे
जन्म मरण दुःख हरते हैं।
तू धर ले सम्यक दृष्टि 'नैनसुख'
निज हित जोवोजी। तेरी नौका० ॥ ३ ॥

भजन

जिन के हृदय सम्यक्त ना,
करनी करी तो क्या करी ॥ टेक ॥
षट् खंडको स्वामी भयो
ब्रह्मांड में नामी भयो।
दिये दान चार प्रकार
अरु दीक्षा धरी तो क्या धरी। जिनके०
तिलतुष परिग्रह तज दिये,
अति उग्र तप जप व्रत किये
पाली दया षट् काय की
भिक्षा करी तो क्या करी। जिनके॥ २ ॥

कल्पों किया उपदेश को,
छुटवा दिये दुःभैपको
पहुंचा दिये वहु मुक्तिमें
रक्षाकी तो क्या करी । जिनके ॥ ३ ॥
आतम रहा वहिरातमा,
जाना अनातम आतमा
परमातम आतम नहीं लखा,
शिक्षा करी तो क्या करी । जिनके ॥ ४ ॥
गुरुमणि करंड विषे कहैं,
दृग सुख विना शिव पद चहैं ।
विन मूल तरु अन फूल फल
इच्छा करी तो क्या करी । जिनके ॥ ५ ॥

भजन

विपत पडे कोई बन्धु न भाई
तुम ही नाथ सहाई ॥ टेक ॥
हंस हस बांधे पाप कर्म जो,
तिन का फल दुःखदाई ।

भोगत बिरियां रुदन करत है,
भूल तेरी अधिकाई ॥ विपत ॥ १ ॥
करमन की गति टारे टरी ना,
वेद पुरानन गाई ।
कर्म भोग तें नाही बचत है,
तीर्थंकर जिनराई ॥ विपत ॥ २ ॥
अपना विधि फल आप ही भोगत,
कोई न होय सहाई ।
मात पिता सुत बांधव नारी,
किस ने पीर बटाई ॥ विपत ॥ ३ ॥
ये सब स्वार्थ के हैं साथी,
बार बार पतियाई ।
अंत समय में काम न आवें,
नाहक प्रीति लगाई ॥ विपत ॥ ४ ॥
सम्पत्ति के सब सगे संगाती,
संकट में दुःखदाई ।
वे दुश्मन, तुम अतिहितकारी,

या में शंक न राई ॥ विपत ॥ ५ ॥
पिता पुत्र सब तब लग प्यारे,
जब लौं करें कमाई ।
जो नाहि द्रव्य कमा कर लावें,
दुश्मन देत दिखाई । विपत ॥ ६ ॥
अर्थ उपार्जन हेत, निरंतर
रहती है दुचिताई ।
पाप कमा कर धन क्यों जोडे,
संग चले ना पाई ॥ विपत ॥ ७ ॥
सम्यक दर्शन ज्ञान चरण तप,
चहूं आराधन भाई ।
ये ही तोकूं सुख के दाता,
सतगुरु सीख सुनाई ॥ विपत ॥ ८ ॥
पंच परम पद सुमरण कीजे,
विपत सकल टर जाई ।
तज सब दुविधा, आतम ध्यावो,
निज पद पावो भाई ॥ विपत ॥ ९ ॥

सुन लिये कान, परख लिये नैनन,
लिये दोनों पतियाई।
वे पाहन, तुम प्रोहन साहिब,
शिव लग सारथवाही ॥ १० ॥
विपत पडे कोई बन्धु न भाई,
तुम ही नाथ सहाई ॥

भजन

अरे जिया कासों नेह करे ॥ टेक ॥

यह संसार शरीर भोग सब
नित मिल मिल बिछुरे ।
काया माया की है जननी,
आधि व्याधि भरे ॥ १ ॥
जा की शरण गहे तू
सो ही तेरो अहित करे ।
स्वार्थ के सब साथी जग में,
किम विश्वास धरे ॥ अरे ॥ २ ॥
जासों तेरी प्रीति उचित है,
तासों रहत परे ।
चोरन के संग में रुचि राखे,
क्यों नहीं जेल परे । अरे ॥ ३ ॥
श्री जिन 'चंद्र' देशना-ज्योति,
जा मन गेह जरे ।
सो ही ज्ञानी शांति सुखी थिर
आवागवन हरे । अरे ॥ ४ ॥
॥ अरे जिया कासों नेह करे ॥

भजन

अरे रावण तू धमकी दिखाता किसे
मुझे मरने का खोफ खतर ही नहीं।
मुझे मारेगा क्या अपनी खैर मना
तुझे होनी की अपने खबर ही नही ॥ टेक ॥

तू क्या सोने की लका का मान करे।
मेरे आगे यह मिट्टी का घर ही नही।
मेरे मन का सुमेरु हिलेगा नहीं।

मेरे मनमें किसी का भी डर ही नही। अरे २
तू ने सहस्र अठारह जो राणी वरी।
हाय ! उन पै भी तुझको सबर ही नही।
पर–तिरिया पै तू ने जो ध्यान किया
क्या निगोदो नरक का खतर ही नही। अरे०।

आयें इन्द्र नरेंद्र जो मिल के सभी !
क्या मजाल जो शील को मेरे हतें।
तेरी हस्ती है क्या सिवा राम पिया
मेरी नजरों में कोई वशर हीं नही। अरे०

क्यों ना जीत स्वयंवर तू लाया मुझे

मेरी चाह थी मन में जो तेरे वसी।
था तू कौन शहर मुझे दे तू वता
क्या स्वयंवर की पहुँची खवर ही नही ॥अरे०॥
हुवा सो तो हुवा अव मान कहा
मुझे राम पे जल्दी से दे तू पठा।
कहै "न्यामत" वगरना तू देखेगा यह
तेरे सर की कसम तेरा सर ही नही ॥ अरे०॥

२

ऐ दिल ! जरा तू कर निगाह
इस जग में तेरा कौन है।
सुख दुःख पे साथ दें तेरा,
सच तो वता वे कौन हैं ॥ टेक ॥
माता पिता या सुत सुता इनमें नहीं कोई सगा
भाई वहन या वंधुजन,
साजन सजन में कौन हैं। हे दिल ॥ १ ॥
नारी को प्यारी जानता
यारों की यारी मानता।
अंत समय में दे दगा

फिर कौन तेरा यार है। हे दिल ॥ २ ॥
तन मन वचन धन कन वसन
हैं सर्व अन्य करले मनन।
'न्यामत' धर्म कर शुभ यतन
इन बिना हितैषी कौन है । हे दिल ॥ ३ ॥

३

सुख दुख दाता कोई नहीं जीव को।
पाप पुण्य कारण दोऊ वीरा ॥ टेक ॥
ये सब निमित्त मात्र हैं ज्ञानी,
यह लख निज उर धर हो धीरा।
इन्द्र फनेन्द्र धनेन्द्र सभी मिल
टार सकें नहीं विधि फल पीरा। सुख। १ ॥
सीता जी के अग्नि कुण्ड में
किया सुरों ने निर्मल नीरा।
जब हर लीनी थी रावण ने
तब क्यों न आए कोइ सुर धीरा। सुख २
वारिषेण पर खडग चलायो।
फूल माल कीनी सुर धीरा।

क्यों ना आए जब तीन दिवस तक
गीदडोने भखो सुकुमाल शरीरा । सुख ३
कृष्ण हने शिशुपाल जरासिन्धु,
भोगे भोग हरि संग केरा ।
कछु न चली जब अपर्य कुशाम्बी
जर्दकुमर ने तन है चीरा ॥ सुख दुख ४ ॥
मानतुंग अडतालीस ताले
तोड के छेदे बंध जंजीरा ।
पाण्डव मुनि जारे दुश्मन ने
कर्म निकांचित है गम्भीरा ॥ सुख दुख ५
एसैं सुख दुख होत जीव को
पाप पुण्य जब चलत समीरा ।
'मंगल' हर्ष विषाद न करना
थिर रखना चहिये निज हियरा ॥ सुख दुख ६

ध्यान दीजिये

खांसीकी प्राकृतिक चिकित्सा करने वालों को चाहिये कि वे घी और मीठा न खांय, जब तक बीमारी न चली जाय । गेहूँका दलिया बहुत थोडे नाम मात्र घी में भून सकते हैं यदि काम ही न चला सकें तो ।